अभ्यास दर्शन

अध्याय 1

अभ्यास दर्शन

क्रिया= सत्ता में संपृक्त जड़ और चैतन्य

क्रियापूर्णता और आचरणपूर्णता(अभ्युदय/सर्वतोमुखी समाधान) हेतु अभ्यास की अनिवार्यता; अनुमान क्षमता(अनुभव से अधिक उदय) ही अभ्यास का आधार

निर्भ्रम ज्ञानावस्था में व्यापक सत्ता में ज्ञान एवं प्रकृति दर्शन; यही अभ्युदयपूर्णता

व्यंजना= रूप, गुण, स्वभाव, धर्म ग्राही एवं प्रदायी क्षमता

व्यंजनीयता ही दर्शन क्षमता एवं अनुभव ही आनंद

किसी न किसी अंश में व्यापक सत्ता में अनुभूति और प्रकृति की व्यंजना हर मानव में; यही अभ्युदय की स्पष्ट संभावना

व्यंजनाएँ(क्रियाएँ) आकर्षण–विकर्षण, आसक्ति–अनासक्ति पूर्वक संपन्न

व्यंजनीयता एवं व्यंजनीत्पादीयता ही संवेदना

अभ्युदय की कामना चैतन्य इकाई (विशेषतः ज्ञानावस्था) में

अध्याय 2

अभ्यास की अनिवार्यता

अभ्यास– अभ्युदयार्थ किया गया आभास

समाधान संपन्न होने हेतु अभ्यास

मूल प्रवृतियों के परिमार्जनपूर्वक कुशलता और पांडित्यपूर्ण व्यवहार ही अभ्यास का प्रधान लक्षण

सर्वतोमुखी= 4 आयाम, 5 स्थिति(व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र, अंतर्राष्ट्र)

व्यक्ति की मूल प्रवृत्ति विचार के रूप में; परिवार में आचरण के रूप में; समाज में सम्मति, प्रोत्साहन एवं भागीदारी के रूप में; राष्ट्र में शिक्षा व व्यवस्था के रूप में; अंतर्राष्ट्रीय प्रवृत्ति मानव चेतना के रूप में

मनुष्य जन्म से ही न्याय का याचक, सही कार्य–व्यवहार करने का इच्छुक एवं सत्यवक्ता– यही अभ्यास हेतु अंतःप्रेरणा

अभ्युदय ही मानव की आशा, आकांक्षा, लक्ष्य

उत्पादन, प्रयोग	व्यवहार(विचाराभ्यास)	अनुभव संयोग
(कर्माभ्यास)	(व्यवहार अभ्यास)	(चिंतनाभ्यास)
हेतु भौतिक शास्त्र	हेतु बौद्धिक शास्त्र	हेतु मध्यस्थ दर्शन
क्रिया शक्ति में	इच्छा शक्ति में	ज्ञान शक्ति में
से प्रतिफल	से सह–अस्तित्व	से गुणात्मकपरिवर्तन फलतः अनुभव
पूर्वक भौतिक समृद्धि	पूर्वक बौद्धिक समाधान	पूर्वक परमानंद की निरंतरता

नियतिक्रम – जड़–चैतन्यात्मक स्थितिवत्ता में जो व्यवस्था है

अमानवीयता– विकृत संस्कार, मानवीयता– संस्कार, देव, दिव्य मानवीयता– संस्कारपूर्ण

संस्कार– लक्ष्य के अर्थ में अर्जित स्वभाव

नियंत्रण को व्यंजित कराने योग्य प्रसारण क्रिया ही शास्त्र; प्रसारण की चरितार्थता ही व्यंजनीयता

स्थितिपूर्ण सत्ता में बोध एवं रूप, गुण, स्वभाव, धर्मात्मक प्रकृति की स्थितिवत्ता को व्यंजित कराने हेतु प्रसारण एवं व्यंजनीयता

व्यंजनीयता ही भास, आभास और प्रतीति; यह संस्कार और अध्ययन का फल; साथ ही अभ्यास और अध्ययन हेतु प्रेरणा और गति

शब्द के अर्थ को, स्थिति–गति के अर्थ को लक्ष्य के रूप में स्वीकारने की क्रिया= व्यंजनीयता

नियंत्रण ही विधि, क्रम ही नीति और समाधान ही व्यवस्था है

विधि और व्यवस्था इकाई में पूर्णता तक संबद्ध; अनन्तर इकाई का स्वनियंत्रित होना ही स्वभाव

पूर्णता की दिशा में व्यवस्था का अनुसरण ही अभ्यास का प्रधान लक्षण

मानव में तात्रय सीमांतवर्ती स्वभाव और आचरण प्रत्यक्ष है; मानव मध्यस्थ क्रिया के अनुसरणपूर्वक ही जागृतिशील है

पदार्थावस्था में सामूहिक, प्राणावस्था में वर्गीय, जीवावस्था में जातीय, ज्ञानावस्था में भ्रमवश सामुदायिक बाध्यताएँ; जागृत मानव में अखण्डता ही सामाजिकता

पदार्थावस्था रूप प्रधान, प्राणावस्था गुण प्रधान, जीवावस्था स्वभाव प्रधान व ज्ञानावस्था धर्म प्रधान

जड़ प्रकृति में रूप, गुण; जीवावस्था में रूप, गुण, स्वभाव; ज्ञानावस्था में रूप, गुण, स्वभाव, धर्म का प्रकाशन

रूप का मिलन रूप से, गुण का मिलन गुण से, स्वभाव का मिलन स्वभाव से, धर्म का मिलन धर्म से प्रत्यक्ष

स्वतंत्रपूर्णता= विवेक सहित विज्ञान का प्रयोग जिसमें ही नियमपूर्ण उत्पादन, न्यायपूर्ण व्यवहार, धर्मपूर्ण विचार व सत्यमय अनुभूति है।

प्रबुद्धता ही वादत्रय की प्रस्थापना, स्थापना और अक्षुण्णता का प्रत्यक्ष रूप है।

समाधानात्मक भौतिकवाद– अर्थ के उत्पादन, उपयोग एवं वितरण–व्यवस्था में एकसूत्रता

प्रत्येक व्यक्ति का उत्पादन उसकी क्षमता, अवसर, साधन एवं अनिवार्यता पर आधारित

क्षमता व स्वसंस्कार, अध्ययन तथा वातावरण पर; अवसर व्यवस्था पर; साधन उपलब्धि पर; अनिवार्यता वर्तमान स्थिति पर आधारित

संस्कार तात्रय की सीमा में; अध्ययन निपुणता, कुशलता, पांडित्य की सीमा में; वातावरण विशेषतः मनुष्यकृत सीमा में (व्यवस्था)

मानवीयता में संस्कार, शिक्षा, व्यवस्था की एकसूत्रता; अतिमानव पूर्ण स्वतंत्र

जागृत मानव ही स्वतंत्र; पूर्ण जागृति= सत्य में अनुभूति; प्रत्यक्ष रूप=संज्ञानशीलता पूर्वक नियंत्रित संवेदनाएँ

वस्तुस्थिति और वस्तुगत सत्य का अनुभव(विवेक का उत्कर्ष) ही अनासक्ति है।

न्याय, धर्म, सत्य पूर्ण विधि से स्वयं में, से, के लिए तंत्रित व नियंत्रित जीवन प्रतिष्ठा ही स्वतंत्रता है।

स्वतंत्रता= मध्यस्थ क्रिया पूर्ण जीवन= आत्मा के संकेतानुरूप बुद्धि, बुद्धि के संकेतानुरूप चित्त, चित्त के संकेतानुरूप वृत्ति, वृत्ति के संकेतानुरूप मन है।

उत्पादन नियमपूर्वक, व्यवहार न्यायपूर्वक, विचार धर्मपूर्वक, अनुभव सत्य में मध्यस्थतापूर्ण

प्रत्येक मानव स्वतंत्रता का आशुक, कल्पनाशील, इच्छुक

नियम, न्याय, धर्म, सत्य ही ज्ञान; मध्यस्थ क्रिया द्वारा इनका उद्घाटन

पदार्थ– प्राण– जीव– भ्रमित मानव– मानव– देवमानव– दिव्यमानव

संस्कृति– जागृति के क्रम में संपूर्ण समाज द्वारा की गई कृतियाँ

सभ्यता– संस्कृति का वर्तमान में अनुशीलन

प्रवृत्ति– आचरण– आचरण और सभ्यता– संरक्षण और व्यवस्था– विधि

नियम, न्याय, धर्म, एवं सत्य अखंड; क्रमशः मानव अनुसरण, अनुशीलन, अनुगमन पूर्वक अनुभव के लिए बाध्य

प्रयोग सिद्ध प्रमाण उत्पादन और व्यवस्था की सीमा में; व्यवहार सिद्ध प्रमाण समाज की सीमा में एवं अनुभव सिद्ध प्रमाण आचरण की सीमा में उपादेयी

मानव की जाति एवं धर्म एक ही है।

भौतिक और रासायनिक सीमा में आस्वादन की अपेक्षा तथा चैतन्य क्रिया की सीमा में सामाजिक मूल्यापेक्षा प्रसिद्ध

यांत्रिकता की सीमा में आस्वादन की आवश्यकता; संज्ञानशीलता, संवेदनशीलता की सीमा में सामाजिक मूल्यों की आवश्यकता

जड़ प्रक्रिया में गति एवं चैतन्य क्रिया में संचेतना ही प्रधान अभिव्यक्ति

चैतन्य क्रिया में कंपनात्मक गति ही संचेतना व वर्तुलात्मक गति ही यांत्रिकता

यांत्रिक प्रक्रिया में आस्वादन, संचेतनशील क्रिया में स्वागत पद्धति

अनुमान= भास, आभास, प्रतीति

प्रवृत्तियाँ योग में, वृत्तियाँ सामाजिकता में, निवृत्तियाँ अनुभव में व्यस्त, व्यवस्थित एवं ओत–प्रोत

अनुभव= सत्य त्रय; अनुभूति ही मानव का आद्यान्त लक्ष्य

स्वभाव, दृष्टि, प्रवृत्ति, वृत्ति एवं निवृत्ति के रूप में प्रत्येक क्रिया प्रत्यक्ष; जिसकी सम्यकता/पूर्णता की कामना व प्रयास

जाने हुए को मानना एवं माने हुए को जानना ही अभ्यास है; अभ्यास का प्रत्यक्ष रूप निपुणता, कुशलता तथा पांडित्य

अध्याय 3 अभ्युदय की अनिवार्यता

भ्रमित मानव – कर्म करते समय स्वतंत्र एवं फल भोगते समय परतंत्र

प्रत्येक मानव– गलती करने का अधिकार एवं सही करने का अवसर

जन्म से न्याय का याचक, न्याय प्रदान करने में असमर्थ

बौद्धिक समाधान, भौतिक समृद्धि की चाहना

शेष प्रकृति की अपेक्षा उपयोग से अधिक उत्पादन क्षमता

सुख, शांति, संतोष, आनंद की चाहना

सतर्कता व सजगता से परिपूर्ण होने की चाहना

अभ्युदय= 4 आयाम(अनुभव, विचार, व्यवहार, कार्य) एवं 5 स्थिति (व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र, अतर्राष्ट्र) की एकसूत्रता तथा समन्वयता

नियमपूर्ण आवश्यकता से अधिक उत्पादन पूर्वक भौतिक समृद्धि; न्यायपूर्ण व्यवहारपूर्वक सहकार्य, सहयोगी व सहानुभूतिपूर्वक निर्विषमता, अभय

प्रकृति दर्शन व सत्ता में अनुभव ज्ञानपूर्वक समाधान, जिसका प्रत्यक्ष रूप ही वादत्रय; सत्ता में अनुभव ही पूर्ण विकास व जागृति, जिसका प्रत्यक्ष रूप दया, कृपा, करूणा का प्रकटन

दिव्य मानव– आप्त कामना, श्रेय कर्म; देवमानव– शुभेच्छा कर्म; मानव– मंगल कामना, संयत कर्म व भोग; राक्षस मानव और पशु मानव– शुभ कल्पना, अशुभ कर्म व असंयत भोग प्रवृत्ति

वादत्रय को सफल बनाने हेतु मानव की परिभाषा, मानवीयता की व्याख्या, समाज की अनिवार्यता, समाज की परिभाषा, समाज का आधार, समाज का लक्ष्य, समाज का आचरण, समाजिकता का अध्ययन, समाज की अक्षुण्णता के लिए प्राकृतिक और वैयक्तिक ऐश्वर्य के सदुपयोग व सुरक्षा का अध्ययनपूर्वक व्यवहारान्वयन आवश्यक

भौतिक समृद्धि– बौद्धिक समाधान– अनुभव; मानव के समस्त कार्यक्रम का उद्‌देश्य अनुभव ही; कार्यक्रम= वैचारिक, व्यावहारिक, उत्पादन; अर्थ= मन, तन, धन; इनके सदुपयोग, संरक्षण, संवर्द्धन हेतु नीतित्रय; नीतित्रय अन्योन्याश्रित

कर्माभ्यास= अन्वेषण, शिक्षण, प्रशिक्षण; व्यवहाराभ्यास= अनुसंधान, अनुसरण, आचरण, संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था

अध्याय 4

सामाजिकता की अनिर्वाता

अभय, समाधान, समृद्धि हेतु

विचार व दर्शन क्षमतावश सुख की अपेक्षा में दस सोपानीय व्यवस्था कार्य, त्रिधाकार्य क्षेत्र के योग से नीतित्रय के आधार पर वादत्रय का विश्लेषणपूर्वक तात्रय की व्याख्या सहित मानवीयता की सीमा में मानव की पाँचों स्थितियों की आचरण संहिता को स्पष्ट कर देता है; जिसका प्रत्यक्ष रूप= अखण्ड सामाजिकता

समाज का आधार– मानव और मानवीयता; प्रमाण त्रय; स्थापित संबंधों में निहित स्थापित मूल्य; नीति त्रय

प्रत्यक्ष, अनुमान, आगम क्रियाएँ मानव द्वारा चरितार्थ

समाज लक्ष्य– अभय, समृद्धि, समाधान

समृद्धि हेतु– कृषि, पशुपालन, प्रौद्योगिकी

निश्चित लक्ष्य जब आकांक्षा व आशावश आवश्यकता या अनिवार्यता के रूप में परिवर्तित होता है; तब यह कार्यक्रम की बाध्यता

अध्याय 5

सामाजिकता का अध्ययन

विश्लेषित स्वीकृत होना ही अध्ययन; रूप, गुण, स्वभाव, धर्म की प्रत्यक्षानुभूति ही विश्लेषण, फलतः अनुभव;

अनुभवविहीन प्रत्येक उत्पादन कार्य में त्रुटि व व्यवहार–कार्य में अपराध भावी

अध्ययन स्थितिवता (सत्यता) का ही है; स्थितिपूर्ण सत्ता में जड़–चैतन्यात्मक प्रकृति की स्थितिशीलता

अध्याय 6

सामाजिकता का आचरण

मानव की 5 स्थिति– व्यक्ति, परिवार, समाज(राष्ट्र, अंतर्राष्ट्र); इनका आचरण परस्परपूरक

आचरण= आशा और आकांक्षापूर्वक किया गया क्रियाकलाप

आशा= आशयपूर्वक स्वादन क्रिया; मूल्य, रूचिग्राही क्रिया ही स्वादन; मानव में संचेतना और गति का संयुक्त रूप ही क्रिया

क्रिया समूह ही क्रियाकलाप; स्वागत क्रिया ही आकांक्षा; संचेतनशीलता ही स्वागत क्रिया का आधार

जागृतिशीलता का प्रत्यक्ष रूप= संचेतनशीलता; इसका चरमोत्कर्ष ही अनुभव क्षमता

संचेतनामूलक 5 प्रवृत्ति हर्षकारक व वेदनामूलक 5 प्रवृत्ति परिपाकात्मक

व्यक्ति में मानवीयतापूर्ण आचरण; परिवार में सहयोग–सहकार्य योग्य क्षमता; समाज में प्रोत्साहन योग्य प्रचार, प्रदर्शन, प्रकाशन; राष्ट्र में संरक्षण और संवर्द्धन योग्य विधि एवं व्यवस्था; अंतर्राष्ट्र में अनुकूल स्थिति(नीति त्रय का संतुलन) प्राप्त कर लेना ही 5 स्थितियों की एक सूत्रता

सानिध्य दूर/पास होने से, जीवनकालीन वियोग में भी संबंध के प्रति जो मूल्य है, उसका परिवर्तन नहीं है।

प्रत्येक परस्परता में दायित्व समाहित; संबंध सीमा ही परिवार और समाज है।

संबंध– शरीर संबंध, जीवन–जीवन संबंध, शिष्ट–शिष्ट संबंध, नीति–नीति संबंध, उत्पादन–उत्पादन संबंध

मनुष्य की मूल शक्ति/मूर्त रूप = निपुणता, कुशलता, पांडित्य; जो क्षमता, उत्पादन और व्यवहार के रूप में प्रकट

स्वत्व– स्वयं से वियोग न होना ही स्वत्व है; स्वत्व= निपुणता, कुशलता, पांडित्य

जो जिसके पास है, उसी का वह बंटन करता है।

विद्या का प्रत्यक्ष रूप कुशलता, निपुणता, पांडित्य; असंग्रह का प्रत्यक्ष रूप आवश्यकता से अधिक उत्पादन; सरलता का प्रत्यक्ष रूप सामाजिकता; स्नेह का प्रत्यक्ष रूप सौजन्यता और अभय का प्रत्यक्ष रूप ही सह–अस्तित्व

असंग्रह एवं सभ्यता के योग से धीरता का, विद्या एवं अभय के योग से वीरता का, स्नेह व सरलता के योग से उदारता का प्रसव

उत्पादन सामान्य और महत्वाकांक्षा की सीमा में उपयोगी; आवश्यकताएँ एवं उपयोग सामयिक

स्वत्व= क्षमता, योग्यता, पात्रता; क्षमता ही वहन, योग्यता ही प्रकटन एवं पात्रता ही ग्रहण क्रियाएँ

वहन पूर्वक स्थापित मूल्यों का निर्वाह; शिष्टतापूर्वक शिष्ट मूल्यों का आचरण एवं व्यवहार; आचरण सहित भौतिक मूल्यों का समर्पण, अर्पण

स्वत्व निर्वाह से, स्वतंत्रता प्रयोजन से, अधिकार उपलब्धि से प्रमाणित है।

अधिकार भौतिक सीमा में, अधिकार एवं स्वतंत्रता बौद्धिक सीमा में, अधिकार, स्वतंत्रता एवं स्वत्व अध्यात्म(अनुभव) में चरितार्थ

मानव मानव के साथ व्यवहार, मनुष्येतर प्रकृति के साथ उत्पादन, अधिक विकसित के साथ गौरव व कृतज्ञ होने एवं सत्ता में अनुभव के लिए प्रवृत्त हैं।

सत्ता में अनुभव करने के लिए अवसर सबके पास समान, किंतु पात्रता व अर्हता में भेद

संस्कृति, सभ्यता, विधि और व्यवस्था का आधार मानवीयता

स्थापित मूल्य ही विधि; स्थापित मूल्यों का निर्वाह आचरणपूर्वक, जो स्वयं में संस्कृति व सभ्यता

वस्तु मूल्यों का नियंत्रण व्यवस्था पर; वस्तु मूल्य निर्धारण उपयोगिता एवं कला मूल्य के आधार पर

अध्याय 7

स्थापित मूल्यों की अनिवार्यता सर्वदा सबके लिए समान; देश, काल, स्थिति में परिवर्तन नहीं– अनिवार्यता

9 स्थापित मूल्य– कृतज्ञता, गौरव, श्रद्धा, प्रेम, विश्वास, वात्सल्य, ममता, सम्मान, स्नेह;

विश्वास– साम्य मूल्य; प्रेम– पूर्ण मूल्य

9 शिष्ट मूल्य– सौम्यता, सरलता, पूज्यता, अनन्यता, सौजन्यता, सहजता, उदारता, आदर/सौहार्द्रता, निष्ठा

मानव–मानव परस्परता में आश्वस्त और विश्वस्त होने का आधार– न्याय

अर्थ के सदुपयोग तथा स्थापित मूल्यों में विकल्प नहीं; शिष्टता में वैविध्यता की संभावना देशकालवश

न्याय ही व्यवहारात्मक जनवाद का आधार; बौद्धिक समाधान व भौतिक समृद्धि हर मानव की आवश्यकता

अध्याय 8

जनाकांक्षा को सफल बनाने योग्य शिक्षा व व्यवस्था

जन्म से मानव न्याय का याचक, किंतु न्याय प्रदान करने में असमर्थ; सही कार्य–व्यवहार की चाहना, किंतु भ्रमवश गलती और अपराध; भौतिक समृद्धि व बौद्धिक समाधान की चाहना, किंतु पूरा करने में असमर्थ; फलतः शिक्षा और व्यवस्था में समर्पित

अर्थ के सदुपयोग और सुरक्षा हेतु राज्यनैतिक एवं धर्मनैतिक नेतृत्व; दर्शन क्षमता ही नेतृत्व क्षमता

दर्शनपूर्वक वादत्रयपूर्वक प्रमाणत्रय सिद्ध

मानव एक सामाजिक न्यायिक इकाई है; मानव में स्वभाव की अभिव्यक्ति एवं धर्म की अनुभूति; अर्थ का सदुपयोग एवं सुरक्षा; सामाजिक मूल्य में शिष्ट मूल्य में वस्तु मूल्य अर्पित

जनवाद का प्रत्यक्ष रूप न्यायसुलभता; भौतिकवाद की चरितार्थता अर्थ के सदुपयोग व सुरक्षा हेतु आवश्यकता से अधिक उत्पादन के रूप में

सामाजिक मूल्य अनुभव में, शिष्ट मूल्य व्यवहार में एवं भौतिक मूल्य उत्पादन में स्पष्ट है

व्यवहार व अनुभव निर्विरोधिता ही समाधान है।

उपयोगिता मूल्य आवश्यकता में, आवश्यकता मूल्य शिष्टता में, शिष्ट मूल्य स्थापित मूल्य में, स्थापित मूल्य मानव मूल्य में, मानव मूल्य जीवन मूल्य में समर्पित

आवश्यकता– सामान्य और महत्व आकांक्षा; अनिवार्यता– बौद्धिक समाधान

मूल्यों में एकता तथा मनुष्येतर (रूप और क्रिया) क्रिया में अनेकता का अनुभव

इकाईयों के मूल्य उन–उन के स्वभाव और आचरण के आधार पर गण्य

सामाजिक(व्यवहार आयाम) और बौद्धिक(विचार आयाम) सफलता हेतु मानव द्वारा अनवरत प्रयास

मानव सामाजिक, न्यायिक इकाई और विवेक विज्ञानपूर्वक जीने वाला

अध्याय 9

समाज व्यवस्था

अखण्ड समाज= दस सोपानीय

समाज के तीन रूप= परिवार, अखण्ड समाज, अखण्ड समाज और सार्वभौम व्यवस्था

भ्रमित संस्था के प्रथम एवं द्वितीय अवस्था में समर शक्ति संचयता की आवश्यकता

तृतीय अवस्था वादत्रय पूर्वक सिद्ध होनेवाली नीतित्रय संबद्ध शिक्षा और व्यवस्था; जो सह–अस्तित्ववादी दर्शन क्षमतानुसार उपलब्ध

सार्वभौमिकता= प्रभुसत्ता= सत्य और सत्यता सहज संपूर्ण मूल्यों का प्रमाण व परंपरा; स्थापित, शिष्ट, व्यवसाय मूल्यपूर्वक अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था= सजगता और सतर्कता सहित सहअस्तित्व

प्रबुद्धता= प्रकृष्ट बोध संपन्नता= यथास्थिति के प्रति पूर्णतया निर्भ्रम= अभ्युदय; यही शिक्षा का आद्यान्त लक्ष्य

प्रभुता= स्वीकार योग्य सूत्र व्याख्या; सत्ता= सार्वभौम व्यवस्था

प्रबुद्धता– प्रभुता– सत्ता– शिक्षा– प्रणाली, पद्धति, नीति– 4 आयाम एवं 10 सोपान की एकसूत्रता (=प्रभुसत्ता) परावर्तित रूप

नियम, न्याय, धर्म, सत्य, देश कालातीत; सार्वभौमिक

मानव जीवन कार्यक्रम में विधि, नीति और व्यवस्था का समाहित रहना प्रसिद्ध

अनुभव के लिए कारण, विचार के लिए सूक्ष्म, व्यवहार के लिए सूक्ष्म–स्थूल तथा उत्पादन के लिए स्थूल तथ्यों का अध्ययन

अध्ययन से वैचारिक नियंत्रण, शिक्षा से व्यावहारिक नियंत्रण व प्रशिक्षण से उत्पादन में नियंत्रण

वैचारिक नियंत्रण(वैचारिक परिमार्जन, संस्कार और गुणात्मक परिवर्तन) ही प्रधान उपलब्धि

निमयत्रय संपन्न विचार ही व्यवहार में सामाजिक एवं उत्पादन में सफल

न्यायपूर्ण व्यवहार= स्थापित संबंधों में निहित स्थापित मूल्यों का निर्वाह

हर संबंध में निहित स्थापित एवं शिष्ट मूल्यों का विवरण

स्थापित मूल्यों में आधारित विधि, शिष्ट मूल्यों में आधारित नीति, उत्पादन मूल्यों में आधारित व्यवस्थापूर्वक सिद्ध न्याय व समाधान सर्वसुलभता

प्रेम पूर्ण मूल्य; प्रकारान्तर से प्रेम ही अन्य आठ मूल्यों के रूप में

गुरू मूल्य में लघु मूल्य समाया हुआ

परिवार जीवन ही बुनियादी व्यवस्था और शिक्षा; यही जीवन जागृति और प्रमाणित होने का आधार

भ्रमवश रूप, बल, पद, धन, बुद्धि से गर्वित होना ही वर्ग भावना; वर्गभावना पूर्वक युद्ध

रूपानुषंगीय जाति निर्णय पदार्थ अवस्था में; रूप, गुणानुषंगीय जाति निर्णय प्राण अवस्था में; रूप, गुण, स्वभावानुषंगीय जाति निर्णय जीव अवस्था में; रूप, गुण, स्वभाव, धर्मानुषंगीय जाति निर्णय ज्ञानावस्था में

धर्ममूलक अध्ययन एवं धर्मानुगमन योग्य जीवन का कार्यक्रम ही सर्वमंगल है।

मनुष्य में संपूर्ण क्रियाएँ संवेदना एवं संज्ञानीयता पूर्वक

संचेतनशील क्षमता ही अनुभव में परमानंद प्रतिष्ठा, विचार में समाधान प्रतिष्ठा, व्यवहार में प्रेम प्रतिष्ठा= प्रतिष्ठात्रय= लक्ष्य

लक्ष्य की अपेक्षा में ही सही–गलत, उचित–अनुचित, विधि–निषेध, पाप–पुण्य का निर्धारण

अध्यात्मवाद भौतिकवाद जनवाद

वृत्ति एवं चित्त की एकसूत्रता में समाधान प्रतिष्ठा; चित्त एवं बुद्धि की एकसूत्रता में प्रेम प्रतिष्ठा; बुद्धि एवं आत्मा की एकसूत्रता में परमानंद प्रतिष्ठा

परम सत्य रूपी सह–अस्तित्व में अनुभूति= परमानंद

नियमपूर्ण उत्पादन, न्यायपूर्ण व्यवहार एवं धर्मपूर्ण विचार= मानवीयतापूर्ण जीवन एवं अतिमानवीयता की ओर स्पष्ट संभावना

विरोध का विरोध, दमन, विजय; प्रबुद्धतापूर्वक विजय; वस्तुगत, व्यवहारगत, विचारगत एवं अनुभवगत सत्य में कोई मतभेद नहीं

मानव जीवन के कार्यक्रम के लिए प्रमाणत्रय ही आधार

मानव मूलतः अनुभूति और विचार पद में प्रतिष्ठित

अनुभव= स्थिति, स्थितिवत्ता की पूर्णतया स्वीकार क्षमता= अभ्युदय का चरमोत्कर्ष; दृश्य रूप= न्यायपूर्ण व्यवहार, नियमपूर्ण उत्पादन

प्रकृति में पाया जाने वाला चक्रत्रय ही संक्रमण प्रक्रिया को स्पष्ट करता है।

बाध्यताएँ कटाह स्थिति में आचरण में प्रकट

ज्ञानानुभूति ही प्रेम एवं प्रेम का आधार ज्ञान है।

सत्ता स्थिर है एवं प्रकृति अस्थिर/स्थितिशील

व्यक्तित्व= आहार, विहार, व्यवहार= सर्वतोमुखी विकास

जीवन, मानव एवं स्थापित मूल्य देश, काल में सीमित नहीं; वस्तु मूल्य सामयिक, परिणाम एवं परिवर्तनपूर्वक

वस्तुगत और वस्तुस्थिति सत्य का दर्शन एवं स्थिति सत्य में अनुभव योग्य क्षमता ही व्यक्तित्व प्रतिभा है।

स्थापित मूल्यों पर ही समाज संरचना की दृढ़ता

अर्थ= मूल्य

मानसिक रूप में त्रुटि, व्यावहारिक रूप में अपराध

शिक्षा और व्यवस्था पूर्वक संस्कार परिवर्तन

मूल्य दर्शन एवं अनुभव क्षमता ही संस्कार का प्रत्यक्ष रूप; संपूर्ण संस्कार तात्रय की सीमा में

सामाजिक मूल्यों की स्वीकार क्षमता=संस्कृति

सामाजिक मूल्यों की वहन क्षमता = सभ्यता

जीने के लिए समृद्धि और जीवन के लिए समाधान व अनुभूति आवश्यक और अनिवार्य

शिष्टता की अभिव्यक्ति प्रसिद्ध है।

अध्याय 10

मानव संस्कृति

मानवीयतापूर्ण आचरण एवं व्यवहार को स्मरण में लाने, प्रेरणा प्रदान करने एवं मार्गदर्शन कराने योग्य क्षमता, जिसमें जन्म से मृत्यु तक ही वैध घटनाओं के निर्वाह पक्ष का समाया रहना आवश्यक; पीढ़ी से पीढ़ी को प्रदत्त

सभ्यता– संस्कृति को आचरण में लाना; दायित्व और कर्तव्य निर्वाह ही इसका प्रत्यक्ष रूप

संस्कृति ही विधि व सभ्यता ही नीति; विधि और नीति की संयुक्त प्रक्रिया ही व्यवस्था

मानव में संयमता बौद्धिक, सामाजिक और प्राकृतिक क्षेत्र में; अनुभव समाधान, व्यवहार, आचरण और उत्पादन में प्रत्यक्ष

अनुभव प्रतिष्ठा और समाधान क्षमता हेतु अनवरत प्रयास; प्रयास में जागृति की अभिलाषा (आभास सहित आशा) समाहित

प्रत्येक अनुमान अनुभव पर आधारित अन्यथा अनुभव के लिए सन्निहित

अनुमान ही शोधपूर्वक भास, आभास और प्रतीति के रूप में उदय; इसके आधार में मानव में योजना, विचार व कल्पना का प्रसव, जो अनुभव में प्रमाणित

अध्ययनपूर्ण क्रिया स्पष्ट योजना और प्रमाणों के रूप में; विचारपूर्ण क्रियाएँ योजनात्मक कार्य–व्यवहार के रूप में; कल्पनात्मक क्रियाओं की उपादेयता अग्रिम शोध व अनुसंधान के लिए उपयोगी

व्यक्तिगत रूप में कई व्यक्ति मानवीयता से समृद्ध एवं अतिमानवीयता से परिपूर्ण; किंतु परिवार के सभी सदस्य वैसे नहीं; फलतः सामुदायिक विविधता

शिष्ट मूल्य सहित स्थापित मूल्य का निर्वाह ही मानवीयता का प्रत्यक्ष रूप

अध्याय 11

व्यक्तित्व एवं प्रतिभा का संरक्षण ही अर्थ का संरक्षण है।

स्थापित मूल्य + मूल्यांकन योग्यता + निर्वाह क्षमता + शिष्ट मूल्य= व्यवहार

पूर्णता का ज्ञान और अनुभूति ही समग्र चैतन्य प्रकृति का अभीष्ट

पदार्थ और प्राण का मूल्यांकन उत्पादन निमित्त, जीवावस्था का मूल्यांकन उपयोगिता और पूरकता निमित्त, ज्ञानावस्था का मूल्यांकन सह–अस्तित्व में सतर्कता–सजगता सहित मानव लक्ष्य के रूप में और मानवत्व सहित व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी के रूप में

भौतिक समृद्धि और बौद्धिक समाधान ही प्रतिभा और व्यक्तित्व की उपलब्धि

सम्यकता/पूर्णतात्रय के प्रति जिज्ञासा ही संचेतना है। अनुभूति सम्यकता का प्रत्यक्ष प्रमाण है; इसी से प्रयोग व व्यवहार प्रमाण

जीवन सहज कंपनात्मक गति की शालीनता ही चिंतनशीलता; स्पष्ट होना ही निर्भ्रमता

वातावरण– प्राकृतिक, वैयक्तिक

विवकचनापूर्ण आचरण ही विचार; विवेचनाएँ तात्रय की सीमा में; इसी श्रृंखला में विवेक फलतः व्यावहारिक नियम त्रय

संपूर्ण विवेचनाएँ परस्परता के निर्वाह में, से, के लिए हैं। मानव का कार्यक्रम–त्रय वादीय क्रम, नियम, नीति, सिद्धांत संबद्ध है।

भौतिकवादी कार्यक्रम– उपयोगिता व कला मूल्य संपन्न वस्तुएँ

जनवाद का मूल तत्व– ' 28 मूल्य

व्यक्तित्व एवं उत्पादन क्षमता निर्माण करने का दायित्व शिक्षा, व्यवस्था और नीति पर आधारित

प्रचार, प्रकाशन, प्रदर्शनपूर्वक प्रोत्साहित करने का दायित्व विद्वता, कला, कविता संपन्न समाज का

मानवीयतापूर्ण जीवन परंपरा ही मानव का एकमात्र शरण; सभी वर्गीयता एवं सामुदायिक चेतना, मानवीयता में विलीन

शिक्षा– माता–पिता, परिवार, परिवार संपर्क सीमा, शिक्षण संस्थान, वातावरण(मानवकृत– प्रचार, प्रकाशन, प्रदर्शन; प्राकृतिक प्रेरणा– भौगोलिक, शीत, उष्ण, वर्षामान)

प्राकृतिक ऐश्वर्य का मूल्य= शून्य, क्योंकि इसके निर्माण में मानव का श्रम नियोजन सिद्ध नहीं

अपव्ययता हेतु अत्याशा हेतु हीनता, दीनता, क्रूरता

अपव्यय के अभाव में साधनों के संपत्तिकरण की उपयोगिता व आवश्यकता सिद्ध नहीं

साधन व स्थान के संपत्तिकरण के अभाव में वितरण व्यवस्था प्राथमिकतः सुलभ

भय की पीड़ा व अपव्यय के आग्रहपूर्वक अधिक स्थान और साधन का संग्रह

श्रम नियोजन और श्रम विनिमयपूर्वक वस्तुओं एवं सेवा का आदान–प्रदान

उत्पादन क्षमता सामान्य, विशेष एवं विशिष्ट प्रभेद से गण्य

उत्पादन के आधारभूत तथ्य– शिक्षा, साधन, विनिमय एवं संरक्षण

नियमत्रय का पालन ही न्याय; जनवादीय चिंतन का आधार ही शिष्टता; सौजन्यता एक प्रधान शिष्ट मूल्य

अध्याय 12

न्याय पाना, सही करना ही साम्यतः जनाकाँक्षा

तर्क का प्रयोजन– तात्विकता से संबद्ध होना; समाधान और तात्विकता के लिए तर्क का प्रयुक्त होना ही इसकी चरितार्थता

तर्क की सीमा में प्रति तर्क; मूल वस्तु के अज्ञात/अस्पष्ट रहते हुए उसके तात्पर्य या फलवत्ता के संदर्भ में की गई प्रश्नोत्तर प्रक्रिया ही वाद–प्रतिवाद, तर्क–प्रतितर्क

तर्क सीमान्तवर्ती विचार, उपदेश एवं प्रचार मानव जीवन हेतु पर्याप्त नहीं

सतर्कता, सजगता ही सफल सामाजिकता का लक्षण

सामाजिकता– शिष्टता सहित स्थापित मूल्यों का निर्वाह; फलतः अभय

अध्याय 13

सतर्कतापूर्ण जीवन में मानवीयता की चरितार्थता स्वभाव सिद्ध है

= व्यक्तित्व एवं प्रतिभा का संतुलन= संस्कृति एवं सभ्यता का साकार रूप

सतर्कता – व्यक्ति की सीमा में व्यक्तित्व के रूप में

परिवार की सीमा में समाधान के रूप में

समाज की सीमा में अखण्डता के रूप में

व्यवस्था की सीमा में निर्विषमता के रूप में

अंतर्राष्ट्र की सीमा में सह–अस्तित्व के रूप में

अभ्युदय= वादत्रय कार्यक्रम

अखण्डता= 10 सोपानीय कार्यक्रम

अर्थ की सुरक्षा में असमर्थतावश पराभव का प्रसव; अर्थ की सदुपयोग में असफलतावश विद्रोह–द्रोह का प्रसव

अखण्डता पूर्वक भयमुक्ति; फलतः अपव्यय का अभाव; सदुपयोग एवं सुरक्षा हर मानव की चाहना

चाहने व करने के बीच में दूरी ही अंतर्द्वंद्व, आत्मविश्वास का अभाव; फलतः पीड़ा

ईश्वर की महत्ता का तर्कसंगत वर्णन– जनजाति में आस्था का आधार; परंतु व्यवहारिक निष्ठा के लिए पर्याप्त आधार नहीं

विविधतापूर्वक भय, शंका; फलतः पीड़ा; समाधानार्थ एकता का चिंतन भावी

अध्याय 14

भ्रमित समाज की द्वितीय अवस्था ही वर्ग है।

भ्रमित मानव, समुदाय की प्रथम अवस्था; वर्ग (आस्था व प्रलोभन युक्त अर्थतंत्र आधारित): द्वितीय अवस्था

वर्गीयता भय, सशंकता एवं अविश्वास से मुक्त नहीं; यही संग्रह व प्रलोभन प्रथम कारण; फलतः समर सामग्री का संग्रह और समर

अतिभोग प्रवृत्ति असामाजिक, असंतुलन का कारण, अपव्यय युक्त; लोभ एवं संग्रह हेतु तृषित

समृद्धि आवश्यकता से अधिक उत्पादनपूर्वक; न कि दीनता–हीनता–क्रूरता पूर्वक किये गये उपार्जन से

अध्याय 15

लाभ उत्पादन नहीं है।

कम प्रदाय के बदले में अधिक वस्तु व सेवा को पाना ही लाभ; यही शोषण का प्रत्यक्ष रूप

वाणिज्य कर्म शुद्धतः विनिमय के अर्थ में; श्रम नियोजन व श्रम विनिमय पद्धति पूर्वक लाभ–हानि/पूँजी से मुक्ति

साम्यवादी व्यवस्था– क्षमतानुसार कार्य व आवश्यकतानुसार भोग

उत्पादन का सुगमतापूर्वक वांछित वस्तु व सेवा में परिवर्तित होना ही विनिमय की चरितार्थता

उत्पादन हेतु 5 आयाम की एकसूत्रता आवश्यक

चैतन्य क्रिया ही स्थापित मूल्यों का वहन, शिष्ट मूल्यों का प्रकटन और उत्पादित वस्तु मूल्यों का मूल्यांकन

सामाजिक जीवन में उत्पादन, उपयोग और विनिमय अविभाज्य अंग

अध्याय 16

विनिमय मानव–जीवन में अनिवार्य प्रक्रिया है।

विनिमय क्रिया मानव परंपरा में अनिवार्य प्रक्रिया– उत्पादन जितना महत्वपूर्ण है, उतना ही उसके सहायक तत्व

संरक्षण के अभाव में सशंकतावश, साधनों के अभाव में उत्पादन सामग्री की संपूर्णतावश, शिक्षा के अभाव में अक्षमतावश, विनिमय के अभाव में दूसरी वस्तु व सेवा में परिवर्तित करने के विघ्नवश उत्पादन में क्षति

विधि का शुद्ध रूप– मूल्य चतुष्टय (जीवन, मानव, स्थापित, शिष्ट) का संरक्षण और संवर्द्धन

अध्याय 17

ईश्वर तंत्र पर आधारित राज्य नीति एवं धर्म नीति रहस्यता से मुक्त नहीं है।

आदर्शवादी और भौतिकवादी नीति विफल; विकल्प– धार्मिक, आर्थिक राज्य नीति

प्रत्येक संस्था की धारणा में मंगलकामना; दर्शन के सुदृढ़ न होने, संस्कृति–सभ्यता मानवीयतापूर्ण न होने से यह असफल

संस्कृति और सभ्यता के संरक्षण हेतु विधि और व्यवस्था

सामाजिकता जागृतिपूर्वक जीने की शैली न कि एक औपचारिक तथ्य

व्यवहार संस्कृति–सभ्यता और विधि–व्यवस्था का योगफल

विधि अनुभव को, संस्कृति विचार को, सभ्यता व्यवहार को, व्यवस्था उत्पादन–विनिमय को स्पष्ट करती है।

अध्याय 18

प्रत्येक मानव इकाई भय मुक्ति के लिए प्रयासरत है।

संदिग्धता, सशंकता, विरोध ही भ्रम है।

आश्वस्ति होने के लिए उत्पादन, विश्वस्त होने के लिए व्यवहार

सफलता हेतु मानव का अशेष प्रयास; सफलता= 4 आयाम, 10 सोपानीय व्यवस्था की एकसूत्रता

4 अवस्था में अपराध= बाल–कौमार्य(माता–पिता संरक्षण), कौमार्य–युवा(अज्ञान, कौतुहल माता–पिता साथी का प्रोत्साहन), युवा–प्रौढ(अज्ञान कौतुहल, प्रलोभन, अत्याशा, कामुकता, अभाव परिवार और साथियों की स्थिति–परिस्थिति की विवशता), प्रौढ़–वृद्ध(अज्ञान, अत्याशा, अभाव, परिस्थिति बाध्यतापूर्वक(रहस्यता, निःसहायता))

अपराध का मूल रूप अज्ञान; यही अत्याशा, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य, काम, क्रोध और अक्षमता के रूप में क्रियाशील

सामाजिक अपराध– परधन, परनारी/परपुरूष, परपीड़ा

वैचारिक अपराध– संग्रह, द्वेष, अविद्या, अभिमान

राष्ट्रीय अपराध– युद्ध, वध, विध्वंस

अंतर्राष्ट्रीय अपराध– प्राकृतिक ऐश्वर्य का दुरूपयोग और संवर्द्धन में विघ्न

मानवीयता से परिपूर्ण होने के अनंतर यह मनुष्य का अधिकार एवं स्वत्व; दिव्य मानव पूर्ण स्वतंत्र

मानवीयता में संस्कृति सभ्यता, विधि, व्यवस्था की एकरूपता; धार्मिक, आर्थिक एवं राजनीतिक एकात्मकता

मानव जीवन और उसके कार्यक्रम को विश्लेषण व व्याख्यापूर्वक बोधगम्य कराने हेतु शिक्षा

शिष्टता, विशिष्टता से पूर्णतः प्रबोधन करा देना और उत्पादन–विनिमय कुशलता और निपुणता योग्य योग्यता का निर्माण करना ही शिक्षण की चरितार्थता

अध्याय 19

आचरणपूर्णता पर्यंत शिक्षा का अभाव नहीं है।

प्रकृति ही अध्ययन हेतु वस्तु और विषय सर्वस्व; सत्ता में मात्र ज्ञान और अनुभूति

4 अवस्था, 3 चक्र और भ्रम मुक्ति की सीमा पर्यंत व्याख्या, विश्लेषण एवं प्रमाण ही दर्शन सर्वस्व

प्रत्येक मानव जन्म से सत्यवक्ता, न्याय का याचक, सही कार्य–व्यवहार करने का इच्छुक

दर्शक ही दृश्य का दृष्टि के द्वारा दर्शन करता है।

प्रत्येक क्रिया संवेदना और गति का संयुक्त रूप– कंपनात्मक और वर्तुलात्मक गति

कंपनात्मक गति ही संवेदनशीलता, स्पंदनशीलता

जड़ प्रकृति में प्रधानतः वर्तुलात्मक गति

कंपनात्मक एवं वर्तुलात्मक गति का योगफल ही क्षमता; जो संस्कारपूर्वक स्वभाव में अभिव्यक्त

अध्ययन की चरितार्थता आचरण में ही; आचरण= आकांक्षा सहित गतिशीलता

10 सोपानीय व्यवस्था में किये जाने वाले आचरणों में ही प्रतिभा और व्यक्तित्व का प्रकटन

प्रतिभा और व्यक्तित्व का संतुलन= जाने हुए को मानना और माने हुए को जानना

प्रबुद्धता ही प्रतिभा और आचरण ही व्यक्तित्व; संपन्नता हेतु शिक्षा और संरक्षण हेतु व्यवस्था

प्रतिभा ही ज्ञान और आचरण ही संस्कृति एवं सभ्यता की अभिव्यक्ति(अभिप्राय पूर्वक किया गया प्रकटन)

अभिप्राय– अभ्युदयार्थ अनुभवमूलक विधि से की गई वैचारिक प्रक्रिया

स्वभाव, धर्म ही मौलिकता, मौलिकता ही मानव का अर्थ, अर्थ ही सार्थकता

मौलिकता= मूल्य; स्थापित, शिष्ट, वस्तु मूल्य का प्रकटन ही अभ्युदय का प्रत्यक्ष रूप

निश्चित दिशा व लक्ष्य की ओर विचार व व्यवहार पूर्वक वहन ही स्वभाव का प्रकटन

व्यवहार और व्यावहारिक शिष्टता के संबंध में विधि जो नीतिद्वय पूर्वक चरितार्थ

स्वभाव, धर्म ही मौलिकता; मौलिकता ही मानव का अर्थ; अर्थ ही प्रकटन; प्रकटन ही स्वभाव है।

अभ्युदयपूर्णता हेतु मानवीयतापूर्ण पद्धति से नियमत्रय का पालन; मानवीयतापूर्ण पद्धति से नियमत्रय का विश्लेषण ही सार्वभौम विधि संहिता

नियम त्रय का प्रत्यक्ष रूप ही शिष्ट मूल्यों सहित स्थापित मूल्य का निर्वाह

व्यवस्था विधि, नीति एवं पद्धति का संयुक्त रूप; अनुभव में विधि, व्यवहार में नीति और उत्पादन–विनिमय में पद्धतियाँ प्रमाणित

विशिष्ट ज्ञान ही विधि जो स्थापित मूल्य और शिष्ट मूल्य को बोधगम्य व व्यवहारगम्य बनाती है; नियति क्रम (विकास और जागृति) अनुसरण प्रक्रिया ही नीति; नियति क्रमानुषंगिक प्रगति ही गुणात्मक परिवर्तन

नियति क्रमवत्ता से संबद्ध उपयोगिता, उपादेयता और अनिवार्यता ही सिद्धि तथा सिद्धिपूर्वक अग्रिम कार्यक्रम ही पद्धति

विधि संहिता ही मानव जीवन संहिता; यही प्रकृति के विकासक्रम की भाषा संहिता; इसका अनुसरण, अनुकरण, आचरण ही नीति

सार्वभौम व्यवस्था के अर्थ में जनवादी तंत्र दस सोपानीय विधि से निर्देशित

अध्याय 20

केवल साधनों की प्रचुरता मानवीयता को स्थापित करने में समर्थ नहीं है

क्योंकि उत्पादन मानव का एक आयाम मात्र, न कि जीवन समग्र

अनुभवमूलक पद्धति से विचारों में समाधान, विचारोनुरूप व्यवहार पद्धति से सह–अस्तित्व और समाधानमूलक उत्पादन से समृद्धि

संबंध विहीन जन्म, जीवन, मृत्यु नहीं

समाज संरचना का आधार मानव मूल्य व स्थापित मूल्य ही; स्थापित संबंधों में निहित स्थापित मूल्य का निर्वाह ही सामाजिकता का प्रत्यक्ष रूप

स्थापित मूल्य अनुभूति है।

मित्र संबंध में समस्त मानव मात्र संबंधित हैं ही

मानवीय शिक्षा व व्यवस्था संहिता का योगफल ही मानव जीवन संहिता जिसमें मानव की परिभाषा, मानवीयता की व्याख्या समाई है।

प्रेम पूर्ण मूल्य पूर्वक अनन्यता ही सामाजिकता की आत्मा, प्राण(प्रेरणा), त्राण(आचरण) है।

जन्म, शिक्षा, व्यवहार, परिवार, उत्पादन, व्यवस्था के प्रभेद से संबंध

स्थापित संबंध में ही निर्वाह क्षमता का उपार्जन कर लेना ही शिक्षित होने की उपलब्धि

व्यवहार– स्थापित, शिष्ट एवं वस्तु मूल्य के योगफल में, अनुभव ही मानव जीवन का प्रधान आयाम

स्वीकृति ही संस्कार; यही क्रम से मूल प्रवृत्ति और संवेग के रूप में अवतरित होकर क्रिया, व्यवहार, आचरण में प्रत्यक्ष

दिव्य मानवीयता की सीमा में आचरण/स्वभाव पूर्णता; देव मानव यशस्वी; मानव मानवीयता पूर्वक सामाजिक

परिणाम का अमरत्व, श्रम का विश्राम, गति का गंतव्य

अध्याय 21

विकास व जागृति ही क्रम है

अपूर्णता से पूर्णता को पा लेना ही उपायों की चरितार्थता

परिणाम–परिवर्तन–परिमार्जन ही गठन, क्रिया और आचरणपूर्णता है।

नियंत्रणपूर्वक गति= नियति; क्रमिकता ही नियति क्रम

मानवीयता= क्रियापूर्णता= सतर्कता

अतिमानवीयता= आचरणपूर्णता= सजगता

निपुणता, कुशलता, पांडित्यपूर्वक ही सार्वभौमिकता/समानता

अभ्युदय को व्यक्त करना ही अभिव्यक्ति

अपेक्षाकृत स्थितिवत्ता ही अनुमान का उदय; यही अध्ययन हेतु की गई उत्सुकता; उदय ही कौतुहल, उत्कंठा(तीव्र इच्छा का उत्कर्ष)

अध्याय 22

प्रत्येक मानव सामाजिकता के लिए समर्पित

निर्भ्रमतापूर्वक ही मानव चारो आयाम और दस सोपानीय परिवार सभा व्यवस्था में पूर्णता का अनुभव करता है। यही पूर्णता अभय और सहअस्तित्व के रूप में प्रत्यक्ष

सार्वभौम सिद्धांत, नीति व पद्धति को पाना अर्थ के सदुपयोग व सुरक्षा के लिए अनिवार्यतम आवश्यकता

मनुष्य अल्प जागृत अवस्था में वस्तु मूल्य का, अर्द्ध जागृत अवस्था में शिष्ट मूल्य का एवं जागृत अवस्था में स्थापित मूल्यों का अनुभव

वस्तु मूल्य के संदर्भ में प्रयोग व उत्पादन विनिमय, शिष्ट मूल्य के संदर्भ में व्यवहार व आचरण, स्थापित मूल्य के संदर्भ में स्वीकार व अनुभव

निपुणता, कुशलता, पांडित्य= विचार सर्वस्व= संपूर्ण समाधान; चार आयाम की परितृप्ति= सुख, शांति, संतोष, आनंद

समृद्धि में उत्पादन–विनिमय आयाम की परितृप्ति; शिष्टतासहित आचरण से व्यवहारिक आयाम परितृप्ति; निपुणता, कुशलता, पांडित्यपूर्ण समाधान से वैचारिक आयाम की तृप्ति; पूर्ण मूल्य और स्थितिसत्य में निरंतरता ही अनुभवात्मक आयाम की तृप्ति

गठनपूर्णता पूर्वक प्रस्थापन व विस्थापन का सर्वथा अभाव; मानवीयता की सीमा में क्रियापूर्णता जिसमें मानव संस्कृति व सभ्यता में संदिग्धता का सर्वथा अभाव, आचरणपूर्णता में सतर्कता व सजगता के प्रति शंका का सर्वथा अभाव

पूर्ण स्वीकृति केवल सत्यत्रय में, से, के लिए

अध्याय 23

कंपनात्मक एवं वर्तुलात्मक गति का वियोग नहीं है।

कंपनात्मक गति ही स्वागतभाव(मूल्य संकेत ग्रहण और प्रसारण क्षमता) और वर्तुलात्मक गति ही आस्वादन भाव को प्रकट करती है।

वर्तुलात्मक गति दवाबात्मक और तरंगात्मक गति को प्रदान करती है।

सामाजिकता के मूल में संज्ञानशीलता ही सक्रिय; जो कंपनात्मक गति की महिमा

महानता का विस्तार ही महिमा; जागृतिपूर्णता ही महिमा संपन्नता

मानव ही शरीरान्तर भी देवात्मा, दिव्यात्मा पद में स्थित

संचेतना= सम्यकता/पूर्णता के लिए जिज्ञासा

पूर्णता– गठन, क्रिया, आचरण; जिसका प्रत्यक्ष रूप ही अमरत्व, सतर्कता और सजगता

अध्याय 24

प्रत्येक उदय का भास–आभास संवेदनशीलता की ही क्षमता है और प्रतीति व अनुभूति संज्ञानीयता की महिमा है।

सर्वप्रथम सुख, समाधान का भास–आभास संवेदनशीलता पूर्वक

किसी ना किसी सीमा में अनुभूति ही अग्रिम स्थितिवत्ता के प्रति अनुमान; अनुमान क्षमता ही प्रयोग, व्यवहार एवं अनुभव के लिए संभावना, अवसर तथा बाध्यता; यही बाध्यता ही प्रवृत्ति, निवृत्ति या वृत्ति; प्रवृत्तियाँ व्यवसाय व भोगों में, वृत्तियाँ व्यवहार एवं आचरण में, निवृत्ति केवल अनुभव में आनंद के अर्थ में प्रायोजित; अमानवीयता की सीमा में प्रवृत्तियाँ, मानवीयता की सीमा में वृत्तियाँ एवं अतिमानवीयता की सीमा में निवृत्तिमूलक क्रिया पाई जाती है।

अनुभव क्षमता ही मानव की विशालता को और अनुभव ही पूर्णता (सतर्कता एवं सजगता) को स्पष्ट करता है।

उत्पादन और व्यवहार में ही क्रमशः समाधान और अनुभव चरितार्थ

आचरण के मूल में मूल्यों का होना पाया जाता है; आत्मानुभूति मूलक व्यवहार भी आत्मानुषंगी, अनुभूति आत्मानुषंगी और अपरिवर्तनीय; यही पूर्ण सजगता, सहजता

चरित्रपूर्वक अर्थ निस्सरण ही चरितार्थता है।

व्यवहारिक हो, उपयोगी न हो– निषेध; व्यावहारिक न हो, उपयोगी हो– असामाजिक

विश्वासघात, प्राणघात, अर्थघात, मानघात, जीवनघात ये सामाजिकता के लिए उपादेयी नहीं; अतः निषिद्ध

व्यवहारिकता– स्थापित एवं शिष्ट मूल्य पूर्वक; वस्तु उपयोगिता और सुंदरता मूल्य सीमांतवर्ती

परिचय ज्ञान, व्यवहार और आचरणपूर्वक सिद्धि के लिए की गई प्रक्रिया ही परिमाण–प्रक्रिया; परिणाम–निर्णय–प्रक्रिया में कारण, गुण, गणित ही आद्यान्त आधार; यही निर्णायक तथ्य त्रय; कारण सहित घटनाएँ, गुण सहित प्रक्रियाएँ एवं मात्रा की गणनाएँ प्रसिद्ध हैं।

रूप, गुण, स्वभाव, धर्म का संयुक्त रूप ही मात्रा है।

आवेशित गति ही सापेक्ष शक्तियों के रूप में द्रष्टव्य; जड़ प्रकृति में विद्युत, ताप, प्रकाश, चुम्बक और शब्द के रूप में; चैतन्य प्रकृति में काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद–मात्सर्य के रूप में स्पष्ट; ये सब आवर्तनशीलता सूत्र प्रक्रिया पूर्वक नियंत्रित व संरक्षित

अध्याय 25

आवेश मनुष्य का इष्ट नहीं है।

मानवीयतापूर्ण जीवन में ही विचार, व्यवहार एवं अनुभूति में एकात्मकता

आवश्यकता से अधिक उत्पादनपूर्वक वस्तु विनिमय एवं व्यवस्था, शिष्ट मूल्यपूर्वक निर्वाह करने वाले व्यवहार और विधि, कुशलता, निपुणता, पांडित्यपूर्ण विचार तथा मूल्य–त्रय के अनुभव की निरंतरता से जीवन चरितार्थ; यही समाधान, जागृति सहज प्रमाण

समाधान ही मानव का इष्ट, अभीष्ट व उपलब्धि= चारों आयाम, दस सोपानीय परिवार सभा व्यवस्था में एकसूत्रता

सतर्कता और सजगता पर्यंत उदय/अनुमान का अभाव नहीं; अनुमान ही अग्रिम जागृति की गरिमा, महिमा व सिद्धि

सामाजिकता का उदय होना ही अध्ययन में पूर्णता, व्यवस्था पद्धति में दृढ़ता, व्यक्ति में आचरण, समाज में पूर्णता, अभयता= सर्वमंगल कार्यक्रम/शुभ

अध्याय 26

संचेतनशीलता ही संस्कार और जागृतिशीलता है।

तात्रय की सीमा में किये जाने वाले आहार, विहार, व्यवहार के रूप में व्यक्तित्व प्रमाणित

प्रतिभा में से निपुणता, कुशलता का परिचय उत्पादन में, व्यक्तित्व का परिचय व्यवहार में स्पष्ट

क्षमता, योग्यता और पात्रता क्रमशः वहन, प्रकटन एवं ग्रहण क्रिया

सतर्कता, सजगता, प्रतिभा और व्यक्तित्व का संयुक्त रूप ही मानव जीवन

आचरण में अर्थ के सदुपयोग के रूप में सजगता स्पष्ट

प्रतिभा उत्पादन की सीमा में उपयोगिता व कला मूल्य का मूल्यांकन व प्रस्थापन तथा व्यवहार में स्थापित मूल्य व शिष्ट मूल्य का निर्वाह है। यही विचार में समाधान और अस्तित्व में अनुभूति

दर्शन क्षमता ही ज्ञानावस्था की चैतन्य इकाई का प्रधान लक्षण; यही मानव की मूल क्षमता/स्वत्व; मानव कम विकसित का दर्शक, समान में सहअस्तित्वशील, अधिक विकास के लिए अभ्यासशील एवं पूर्णता के लिए जिज्ञासु; प्रकृति का अध्ययन और दर्शन तथा मूल्यों का अनुभव

पूर्णता त्रय संपन्नता ही समाधान और प्रतिभा का चरमोत्कर्ष; यही अभ्युदय; इसे सर्वसुलभ बनाना ही मानवीय शिक्षा और व्यवस्था का आद्यान्त लक्ष्य

सफलता और अवसर का स्पष्ट विश्लेषण ही शिक्षा; प्रत्येक व्यक्ति के लिए अवसर सुलभ होना ही व्यवस्था की गरिमा

सजगता और सतर्कता का प्रकटन अर्थ के सदुपयोग एवं सुरक्षा के रूप में द्रष्टव्य

मन आश्रित तन, मन और तन आश्रित धन; मन= विचार= निपुणता, कुशलता, पांडित्य

मूल्यानुभूति में असमर्थता ही उत्पादन में अपूर्णता, सदुपयोग में अक्षमता और सुरक्षा में असमर्थता है।

संचेतना का पूर्ण उपयोग= समाज में व्यवहार और व्यक्ति में अनुभूति

समाजिक मूल्यानुभूति ही अखण्डता का और वस्तु मूल्यानुभूति ही समृद्धि का द्योतक

अध्याय 27

सामाजिकता का आधार संस्कृति और सभ्यता ही है– उपलब्धि सह–अस्तित्व और समृद्धि पूर्णता को पाने की प्रक्रिया श्रृंखला ही संस्कृति, जिसका आचरण ही सभ्यता

संस्कृति का मूल रूप विचार, जो तात्रय की सीमा में

संस्कृति का शुद्ध रूप– संस्कार संपन्न होने की परंपरा; यही पूर्ण शिक्षा है। क्रम ही परंपरा

परंपरा किसी लक्ष्य को पाने के लिए किया गया प्रयास है।

मानव व्यवहार परंपरा का मूल लक्ष्य= जीवन लक्ष्य; व्यवहार प्रमाण= मानव लक्ष्य

संस्कारपूर्वक ही प्रवृत्तियों का उदय, जो संवेग के रूप में अवतरित होकर क्रियाशील

संस्कृति परंपरागत उद्‌बोधन, प्रयोजन, प्रोत्साहन, संरक्षण, संवर्द्धन, परिपालन प्रक्रिया है जो अवधारणापूर्वक संस्कार का आरोपण करती है।

प्रत्येक वर्ग के मूल में परंपरा के स्थापक, ज्ञापक, प्रेरक का रहना अनिवार्य; परंपरा प्रत्यक्ष, परोक्ष आधार पर प्रतिस्थापित

प्रत्यक्ष के स्थूल, सूक्ष्म व कारण भेद हैं, जो प्रकृति की सीमा में है; परोक्ष के रहस्य और अरहस्य भेद हैं जो सह–अस्तित्व में ज्ञान और अनुभूतिपरक हैं।

अवधारणा भास–आभास पूर्वक; (जबकि धारणा सक्रम ज्ञानपूर्वक स्वीकृति) जिसे शिक्षा ही स्थापित करती है।

शिक्षा– माता–पिता, परिवार, शिक्षा केंद्र, वातावरण(प्रचार, प्रदर्शन, प्रकाशन)

शैशव व बाल्यावस्था में अवधारणाएँ सुलभतः स्थापित, युवावस्था तक दृढ़

परंपरा की स्वीकृति ही प्रतिबद्धता, जो संकल्पपूर्ण प्रवृत्तियों के रूप में प्रकट; आहार, विहार, आचरण, व्यवहार, उत्पादन, उपभोग, वितरण और दायित्व, कर्तव्य, निर्वाह के रूप में प्रत्यक्ष

समाज के लिए सहायक तत्व ही विधि और असहायक तत्व ही निषेध

उत्कंठा ही जिज्ञासा; पीड़ा अभाव का द्योतक; इन दोनों के योगफलपूर्वक ही अग्रिमता में संक्रमण

उत्कंठा अथवा पीड़ा की पराकाष्ठा के अनंतर ही प्रत्येक इकाई परिवर्तन में समर्पित

अध्याय 28

जिज्ञासात्मक और आवेशात्मक पीड़ाएँ प्रसिद्ध हैं।

अज्ञात और अप्राप्त के प्रति जिज्ञासा; जिज्ञासात्मक पीड़ा ही अनुसंधान की उत्प्रेरणा

आवेशात्मक पीड़ा सम्मोहन(काम, मद, मोह, लोभ) और विरोध(क्रोध, मात्सर्य) के रूप में

औचित्यता की स्वीकृति और अनौचित्यता की अस्वीकृतिपूर्वक ही विकास, गुणात्मक परिवर्तन

पीड़ा के बिना संक्रमण(सम्यकता की ओर प्रवेश) और व्यतिक्रमण(ह्रास) सिद्ध नहीं

अध्याय 29

मानव में वर्गविहीनता जन्म से ही द्रष्टव्य

शैशवावस्था से ही तदाकार वृत्ति; मानव संतान में जाति, मत, संप्रदाय, वर्ग बोध का अभिभावकों द्वारा प्रतिस्थापन

वर्ग सीमावर्ती बाध्यताएँ विशेष घटनावश विशिष्ट परिवर्तन (मानवीयता, अतिमानवीयता को पा लेना) होने तक

परंपरा किसी सीमा से सीमित होने के कारण अनुभवमूलक तत्वों का समावेश करने में असमर्थ होकर व्यक्ति/व्यक्तित्व की आदर्श रूप में स्वीकृति

प्रत्येक व्यक्ति का स्वविवेक पूर्वक मानवीयतापूर्ण होना संभव नहीं; अतः जागृत शिक्षा और परंपरा का सुलभ होना आवश्यक

मानव धर्म, मानव जाति, अखण्ड समाज/भूमि, व्यापक सत्ता रूपी ईश्वर का पूर्णतया बोध करानेवाली पद्धति से वर्ग चेतना मानवीय चेतना में परिणित

यही व्यक्ति के जीवन में सार्वभौमिक आचरण, परिवार की सीमा में सहयोग, समाज की सीमा में प्रोत्साहन, राष्ट्र की सीमा में संरक्षण–संवर्द्धन, अंतर्राष्ट्र की सीमा में अनुकूल परिस्थितियाँ

अध्याय 30 मानव में अखण्डता के लिए मानवीयता ही एकमात्र शरण है।

मानवीयता ही मानव समाज की धर्मीयता; पदार्थावस्था में रूपवत्ता पूर्वक अस्तित्व धर्मीयता, प्राणावस्था में रूप, गुणवत्तापूर्वक पुष्टि धर्मीयता, जीवावस्था में रूप, गुण, स्वभाववत्ता सहित जीने की आशा धर्मीयता, ज्ञानावस्था में रूप, गुण, स्वभाव, धर्मवत्ता ही सुखधर्मीयता

अनुभव/अनुभूति केवल मूल्यों में, से, के लिए; पूर्णता के प्रति प्रयासोदय ही सुसंस्कार; जो धर्म सफल जीवन को पाने के लिए अनिवार्य

मानवीयतापूर्ण जीवन में अनिष्ट चिंतन का सर्वथा अभाव; अनिष्ट चिंतन हेतु विरोध आवश्यक; परस्परता में मानव का निर्विषम होना प्रथम उपलब्धि; यही स्वर्गीयता का प्रथम सोपान

परंपरा और परस्परता ही संस्कार परिवर्तन का एक सशक्त कारण; सार्थक विचार के मूल में संस्कार; संस्कार ही इच्छा और संकल्प के मूल में; अवधारणा बुद्धि में, इसके पहले भास, आभास, प्रतीति क्रमशः मन, वृत्ति, चित्त में

संस्कृति के अभाव में संस्कार का उदय घटनाओं में, से, के लिए संबद्ध; प्रत्येक मानव जीवन में घटनेवाली घटनाएँ गर्भ, जन्म, नामकरण, शिक्षा, दीक्षा, विवाह एवं मृत्यु; ये सभी घटनाएँ मूल प्रवृत्ति में परिवर्तन को स्थापित करती है; मानवीयता और अतिमानवीयतापूर्ण जीवन प्रदायी प्रेरणा परंपरा ही मानवीय संस्कृति; जो परंपरात्मक पद्धति से उपलब्ध; इसी अर्थ सिद्धि हेतु ऐतिहासिक स्मरण व कला प्रदर्शन आवश्यक

व्यक्ति में सफलता= चारों आयाम की एकसूत्रता पूर्ण कार्यक्रम; समाजिक सफलता= दस सोपानीय व्यवस्था की एकात्मकता; संस्कार का मूल मूर्त रूप= आशा, विचार, इच्छा एवं संकल्प के क्रियाकलाप

मूल्यानुभूति योग्य क्षमता निर्माण में सहायक होना ही संस्कृति का शुद्ध रूप; संस्कृति का प्रत्यक्ष रूप= शिक्षा, व्यवस्था; सभी मूल्य अनुभव में ही प्रमाणित; अनुभव प्रमाण ही क्रम से व्यवहार और प्रयोग में उद्घाटित; चैतन्य क्रिया में ही भास, आभास, प्रतीति, अवधारणा एवं अनुभूति; देव पद चक्र में संक्रमण का आधार– मानवीयतापूर्ण संस्कार व संस्कृति;

संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था में एकरूपता ही सर्वस्वर्गीयता; इसे सफल बनाने की दिशा में क्रमशः शिक्षा, विधि, व्यवस्था, संस्कृति और सभ्यता का प्रमाण मानवीयसंस्कृति की स्थापना है।

संतोष= पूर्ण तोष= पूर्ण तृप्ति; जिसमें संशय, विपर्यय और भय का अत्याभाव; जो जिसका अपव्यव करेगा, वह उससे वंचित हो जाएगा

अध्याय 31

मानवीयतापूर्ण जीवन में से के लिए सुसंस्कारों का अभाव नहीं है।

गर्भसंस्कार से ही संस्कार प्रक्रिया आरंभ

गर्भवती द्वारा किया गया मानवीय स्वभाव संपन्न संभाषण, शिष्ट मूल्य पूर्ण आचरण, स्थापित मूल्यों की अनुभूति, व्यक्तित्व में संयमतापूर्वक गर्भस्थ शिशु में सुसंस्कारों का निर्माण और जन्म के अनंतर सुसंस्कारों को ग्रहण करने में सुगमता

जन्म समय में भी संस्कारों का अभाव नहीं

मंगलमय कामनापूर्ण, कोलाहल विहीन वातावरण, सुगम प्रकाश, सुखद वायु, मधुर संभाषण की व्यवस्थिति का निर्माण करने से जन्म समय में उत्तम संस्कार स्थापित

नामकरण संस्कार– नामकरण व्यवहार के लिए अनिवार्यतम घटना

प्रधानतः चैतन्य क्रिया को इंगित करने वाला नाम शुभद; तादाम्य, तदाकार योग्य–योग्यता शैशवावस्था से ही समाई

मानवीयता का प्रबोधन उद्‌बोधन करने का आधार भी नाम ही; जीवन में प्रमाण सिद्धि/ प्रमाणिकता को उद्‌दीप्त और प्रकट करने के लिए आधार केवल नाम ही है।

गुणात्मक जागृति हेतु शिक्षा–संस्कार= गुणात्मक विकास की प्रेरणा हेतु कार्यक्रम, पद्धति, नीति, वस्तु, विषय प्रणाली एवं प्रक्रिया

क्रमशः माता–पिता, परिवार, संपर्क और संबंध, शिक्षा मंदिर, शिक्षा संस्थान और मानवकृत वातावरण(प्रचार, प्रकाशन, प्रदर्शन समुच्चय)= स्थापित और शिष्ट मूल्य का प्रबोधन + वस्तु मूल्य का शिक्षण

शिक्षापूर्वक कृतज्ञता, गौरव, श्रद्धा, प्रेम, विश्वास, वात्सल्य, ममता, सम्मान और स्नेहात्मक मूल्यों का अनुभव करने योग्य संस्कारों की स्थापना

विधिवत् वहन के लिए की गई प्रतिज्ञा ही विवाह

दो जागृत मानव द्वारा समान संकल्प के क्रियान्वयन की प्रतिज्ञा; समाज गठन का भी प्रारूप; परस्पर दायित्व वहन हेतु घोषणा; संस्कृति की साम्यता ही सफलता का आधार

यतीत्व और सतीत्व– मानवीयतापूर्वक देव और दिव्यमानवीयता की ओर गतिशीलता

दीक्षा– मानव धर्मीयता का अनुभव करने के लिए की गई प्रक्रिया, पद्धति व प्रणाली; गुणात्मक परिवर्तन की ओर सुस्पष्ट दिशा निर्देशन के संदर्भ में

स्वमूल्यानुभूति (क्रमशः 30 मूल्य) क्षमता ही सर्वोच्च जागृति

शिक्षा द्वारा मानवीयता को स्थापित किया जाना और दीक्षा द्वारा अतिमानवीयता की ओर दृढ़ता एवं गति को प्रस्थापित करना

स्थापित मूल्यानुभूति में, से, के लिए अनुमान एवं अनुशीलन योग्य प्रेरणा, परंपरा, प्रक्रिया ही दीक्षा का आद्यान्त प्रमाण

सत्ता में अनुभूति ही चिंतनाभ्यास का चरम लक्ष्य= निर्विचार अनुभूति; इस हेतु जिज्ञासा स्थापित मूल्यानुभूति के अनन्तर स्वभावतः उद्‌गमित; अवांछित विचारों से मुक्ति ही निर्विचार है।

दीक्षा ही चिंतनाभ्यास में आरूढ़ कराने का एकमात्र उपाय; मानवीयता से दिव्यमानवीयता में अनुगमन प्रक्रिया ही चिंतनाभ्यास

पूर्ण विकास (जागृतिपूर्णता) हेतु दीक्षा संस्कार, योगाभ्यास

गठनपूर्णता से अधिक विकास, क्रियापूर्णता से अधिक अभिव्यक्ति और आचरणपूर्णता से अधिक अनुभूति नहीं

वर्तमान में चरितार्थता(अखण्ड समाजिकता= अभय, समृद्धि), भविष्य की योजना(आर्थिक एवं सांस्कृतिक संतुलनपूर्वक सफल), विगत का इतिहास(संस्कृति की अभिव्यक्ति और आर्थिक उपलब्धि का संयुक्त घटनाक्रम)

शरीर के माध्यम से जीवन में गुणात्मक परिवर्तन/परिमार्जन= प्रबुद्धता= निपुणता, कुशलता, पांडित्य

वृद्धावस्था में अपनत्व सहित अपनों की सेवा आकांक्षित एवं वांछित; ये सेवा मरणोत्तर जीवन हेतु उपहार

शरीर त्याग के अनन्तर स्वभाव गति हेतु सहायक तत्व; क्योंकि मानव प्रधानतः मानव के आचरण, सेवा और व्यवहार से आवेशित तथा आवेशमुक्त होकर स्वभाव गति में अवस्थित

शरीर त्याग के समय जो अवधारणाएँ स्वीकृत, वही पुनः जन्म लेने तक स्थायीभूत; यही संस्कार और संस्कार हेतु स्तुषि

साधन के बिना इकाई में गुणात्मक परिवर्तन सिद्ध नहीं; चैतन्य इकाई के लिए शरीर सर्वप्रथम/वरीय साधन; उपसाधन= आकांक्षा द्वय वस्तु

नवधा स्थापित मूल्य का निर्वाह ही जन्म घटना के अनन्तर स्वर्गीयता तथा मृत्यु घटना के अनन्तर सुसंस्कार का स्थापनाक्रम

शरीर कष्ट के परिहारार्थ समुचित चिकित्सा एवं सेवा समर्पण, वैचारिक समस्या परिहार योग्य व्यवहार और आचरणपूर्ण वातावरण से मरणोत्तर जीवन के लिए उत्तम संस्कारों की स्थापना; इस हेतु जीवन की चरितार्थता, गौरव और सम्मानात्मक घटना, स्मरण एवं सद्गुणों का वर्णन; अभ्युदय की कामना

वेदनाविहीन मृत्यु घटना के सहायक क्रियाकलाप ही मृत्यु संस्कार

शुभकामना का प्रसारण; प्रत्येक प्रसारण ग्रहण हेतु उपलब्धि

मरणोत्तर स्थिति में भी ग्रहण क्षमता; साधनविहीनतावश ही प्रसारण क्रिया का अभाव

अध्याय 32

संस्कार ही संस्कृति को प्रकट करता है।

सभ्यता= व्यवहार, विहार, आहार

अज्ञान, अत्याशा और अभाव ही मानव के अपराध का मूल कारण

व्यवहार व्यवस्था को, विहार/आचरण संस्कृति को और आहार स्वास्थ्य को प्रकट करता है।

नाम से अनन्यता, तादात्म्य, तद्रूपता; क्रम से माता–पिता, परिवार, बन्धु–बान्धव, समाज, राष्ट्र और अंतर्राष्ट्र में अनन्यता को स्थापित करने की संभावना; क्योंकि स्थापित मूल्य सर्वत्र समान

स्थापित मूल्य ही अनुभव, शिष्ट मूल्य ही आचरण और व्यवहार, वस्तु मूल्य ही समृद्धि

विहार– श्रम हरणार्थ की गई प्रक्रिया; आशा, आकांक्षा और आवश्यकता/अनिवार्यता पूर्वक की गई चरितार्थता ही आचरण; रूचियाँ आचरण में अभिव्यक्त

संस्कारानुबंध आचरण विशेषतः स्वयं की तृप्ति हेतु प्रायोजित, जबकि व्यवहार प्रधानतः परतृप्ति के संदर्भ में भी संपन्न

स्वयं की तृप्ति नियमत्रय के पालनपूर्वक

आहार शरीर पोषण की सीमा में; शरीर विहार, व्यवहार और उत्पादन का साधन

मानवीयता में व्यवहार और अतिमानवीयता की सीमा में आचरण ही सर्वोच्च उपलब्धि

अध्याय 33

केवल उत्पादन ही मानव के लिए जीवन सर्वस्व नहीं है।

उत्पादन मानव जीवन में एक आयाम; आचरण को प्रस्तुत करने हेतु पाई जाने वाली सीमा ही आयाम; व्यवहार में ही वस्तु मूल्य की प्रयुक्ति, अन्यथा उत्पादन निर्मूल्य

परंपरा के चारों आयाम की अक्षुण्णतापूर्वक मानव की परस्परता में विश्वास, इतिहास में गौरव, भविष्य के लिए योजनाबद्ध कार्यक्रम और स्पष्ट रूप रेखा

अखण्ड समाज परंपरा में ही प्रतिभा और व्यक्तित्व का संतुलन= भौतिक समृद्धि, बौद्धिक समाधान

मूल्यत्रय अनुभूति योग्य क्षमता, योग्यता, पात्रता ही शिक्षा की गरिमा और व्यवस्था की महिमा

सामाजिक मूल्यों का शिष्ट मूल्यों सहित निर्वाह ही न्यायपूर्ण जीवन; वस्तु मूल्य ही समृद्धि

नीति द्वय का विधिवत् पालन ही नैतिकता

सत्ता रचनाविहीन स्थिति और प्रभाव विशेष; यही नियम, न्याय, धर्म, सत्य और आनंद स्थिति में प्रमाण

मूल्यत्रयानुभूति की सर्वसुलभता ही शिक्षा और व्यवस्था का आद्यान्त कार्यक्रम

मानव जीवन का विधिवत कार्यक्रम नीतित्रय की सीमा में; नीति, पद्धति और प्रणाली का संयुक्त रूप ही व्यवस्था; शिक्षा और व्यवस्था ही प्रबुद्धता की प्रबोधन और संरक्षण प्रक्रिया

ज्ञान की तृषा हो, पर परंपरा में सुलभ न हो; इस स्थिति में मानव द्वारा ही घटनाविधि से इसकी भरपाई

नीतित्रय दिव्यमानव में स्वतंत्रतापूर्वक चरितार्थ, देवमानव में संयमतापूर्वक सफल, मानवीयतापूर्ण मानव में समाधानपूर्वक सफल एवं चरितार्थ

विकासक्रम में अवरोधता ही विरोध, विकास की ओर गतिशीलता ही विजय, क्रियापूर्णता ही सफलता तथा आचरणपूर्णता ही जीवन चरितार्थता

अनुभव में मध्यस्थतापूर्वक परमानंद उद्गमित, विचार में मध्यस्थतापूर्वक चारों आयाम में अंतर्विरोध का उन्मूलन, व्यवहार में मध्यस्थतापूर्वक बहिर्विरोध(पाँचों स्थितियों) का शमन; विरोध विहीन क्षमतापूर्वक ही स्थापित मूल्यों का अनुभव और शिष्ट मूल्य की अभिव्यक्ति

अध्याय 34

मानव के संपूर्ण संबंध गुणात्मक परिवर्तन के लिए सहायक हैं।

स्थापित मूल्यानुभूतिपूर्वक ही गुणात्मक परिवर्तन; संबंध में निहित मूल्य निर्वाह ही जागृति और उपेक्षा ही ह्रास का प्रधान कारण

द्रोह–विद्रोह/विरोध– संघर्ष

संघर्ष– जनाकांक्षा और उपलब्धि के मध्य में पाई जाने वाली रिक्तता

बुद्धि रूप, बल, धन और पद से वरीय

मानवीयता से परिपूर्ण, समृद्ध और समाधानित मानव ही अन्य की जागृति में सहयोगी

प्रतिभा ज्ञान, विज्ञान, विवेकपूर्वक व्यवस्था और उत्पादन अर्थात् निपुणता, कुशलता, पांडित्य में प्रत्यक्ष; व्यक्तित्व विहार, व्यवहार और आहार में प्रकट

अध्याय 35

कुशलता, निपुणता और पांडित्य ही ज्ञानावस्था की मूल पूँजी है।

निपुणता और कुशलता का प्राकृतिक ऐश्वर्य पर नियोजन= उपयोगिता, कला मूल्य का स्थापना

कुशलता और पांडित्य का व्यवहार में नियोजन= शिष्ट मूल्य का प्रकटन एवं निर्वाह

पांडित्य का अनुभवमूलक विधि से नियोजन= मानव और स्थापित मूल्य का निर्वाह

आवेश ही षड्विकार(काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य) के रूप में बहिर्गत

दर्शन क्षमता ही वातावरण क्रिया संकेत–ग्रहण और प्रसारण प्रक्रिया है।

संचेतनावश ही दूरी, काल, उचित, विहित, नित्य, सत्य, न्याय, धर्म की दर्शन और अनुभव क्षमता है।

अस्तित्व पूर्णता(स्थिति सत्य) में अनुभूति और वस्तुस्थिति, वस्तुगत सत्य का दर्शन

सह–अस्तित्व का प्रत्यक्ष प्रमाण– व्यवसाय में नियम, व्यवहार में न्याय, विचार में धर्म और अनुभूति में सत्य

पांडित्य अनुभूति का, कुशलता शिष्टता व कला पक्ष का, निपुणता उपयोगिता एवं यांत्रिकता का अध्ययन एवं प्रमाण

पदार्थ अवस्था रूप, प्राण अवस्था गुण, जीव अवस्था स्वभाव, ज्ञान अवस्था धर्म प्रधान परंपरा; यही अवस्था विशेष का इतिहास; अभिव्यक्ति ही परंपरा

ज्ञानावस्था का धर्म= सुख(=सुख, शांति, संतोष, आनंद)

संपूर्ण उदय विस्तार अनुमान क्रिया; तर्क का प्रतितर्क और ऊहा की प्रत्यूहा

निपुणता और कुशलता ही तकनीकी शिक्षा की उपलब्धि; फलतः आकांक्षाद्वय संबंधी वस्तुओं का उत्पादन

संवेदनशीलता में गुणात्मक परिवर्तन की क्रम श्रृंखला में यांत्रिक तत्व साधन

संचेतनशीलता की चरमोत्कृष्ट उपलब्धि– अनुभूति/अनुभवमयता

अध्याय 36

समाधान, समृद्धि, अभय, सह–अस्तित्व में अनुभव मानव धर्म की पार्थिवता है।

विचार शक्ति का प्रसारण चैतन्य इकाई की स्वभाविक प्रक्रिया; किसी के भी प्रति पूर्ण विवेचना हो जाना ही समाधान

विश्लेषण सत्ता में संपृक्त प्रकृति का; सत्ता में ज्ञान और अनुभूति प्रमाणित

क्रम और व्यतिक्रम दोनों ही नियम से संरक्षित

मनुष्य में ही समृद्धि पर अधिकार, व्यवहार में संयमता, विचार में स्वतंत्रता और अनुभवपूर्ण स्वत्व; परंपरा के चारों आयाम और 5 स्थिति की एकरूपता में ही मानव धर्म की अक्षुण्णता

अध्याय 37

व्यक्ति का व्यक्तित्व न्याय प्रदायी क्षमता से प्रदर्शित है।

शिक्षा परंपरा ही प्रधानतः संस्कृति; जो न्यायपूर्ण व्यवहार, संयत आचरण और नियमपूर्ण उत्पादन हेतु समुचित प्रेरणा, प्रोत्साहन, मार्गदर्शन, सहभोग और सहानुभूतिपूर्ण कार्यक्रम को निर्वाहपूर्वक स्पष्ट करती है= संस्कृतिपूर्ण सभ्यता; इसके संरक्षण हेतु विधि और व्यवस्था

जीवन में तृप्ति ही स्वधर्मीयतापूर्ण प्रसारण का प्रधान लक्षण है।

पांडित्य ही स्थापित मूल्य की अनुभूति और शिष्ट मूल्य की अभिव्यक्ति; अनुभूतिपूर्वक ही शिष्टता

मानव धर्म को स्थापित और संरक्षित करना ही शिक्षा की गरिमा, प्रबुद्धता ही महिमा, व्यवस्था में पारंगतता, जीवन में सार्थकता, भौमिक स्वर्गीयता, मानव में दैवीयता और दिव्यता, नित्य मंगलमयता एवं धर्ममय सफलता= स्वभावपूर्ण नीति–त्रय का विस्तार

इतिहास से संबद्ध हुए बिना वर्तमान में निष्ठा, भविष्य में विश्वास नहीं; मानव का इतिहास मानवीयता से आरंभ

राज्यनैतिक और धर्मनैतिक सभी संस्थाओं, व्यवस्था संहिताओं, प्रचार, शिक्षा, प्रदर्शन, प्रकाशन, कला, उत्पादन, उपभोग, वितरण, व्यवहार और आचरण की प्रक्रिया को मानवीयतापूर्ण सार्वभौम तथ्यों से संबद्ध कर लेना ही अखण्ड सामाजिकता का एकमात्र उपाय

इतिहास के प्रति गौरवानुभूति के मूल में अनुभव, प्रमाण परंपरा का होना आवश्यक

प्रामाणिकता अनुभव है, प्रमाण शिक्षा है।

व्यक्तित्व और प्रतिभा का ही इतिहास

सही और न्याय, निरोग और अनुकूल वातावरण, सामान्य और स्वभाव गति, महत्व और सामान्याकांक्षा, अभयता और स्वतंत्रता, भाव और ज्ञान, सम्मान और आदर, सह–अस्तित्व और समृद्धि, सत्य और धर्म तथा निभ्रान्ति और समाधान का ही इतिहास, प्रमाण, परंपरा

अध्याय 38

संपूर्ण अध्ययन अनुभूति, समाधान, सह–अस्तित्व और समृद्धि के लिए ही है।

मानव जीवन में गुणात्मक परिवर्तन हेतु निश्चित दिशा एवं गति को प्रदान करना ही शिक्षा नीति, पद्धति, प्रणाली का एकमात्र उद्देश्य है। समर्थ शिक्षा ही गंतव्य के लिये गति और विश्राम के लिये दिशा को अध्ययन पूर्वक स्पष्ट करती है ।

अध्ययन= श्रवण, मनन, निदिध्यासन की संयुक्त प्रकिया

निदिध्यासन= निश्चित अवधारणा की स्थापना प्रकिया

अवधारणा ही अनुमान की पराकाष्ठा और अनुभव के लिये उन्मुखता; अवधारणा के अनन्तर अनुभव

रत का गंतव्य रति; रति= सान्निध्यात्मक, अनुभवात्मक

सान्निध्यात्मक= जड़ चैतन्य प्रकृति की परस्परता में

अनुभवात्मक= सत्ता मे मूल्य त्रय की अनुभूति

नीति त्रय की अन्योन्याश्रयता और वादत्रय भी अनुभूति एवं समाधान

अर्थ की विपुलता एवं सामाजिक व्यवहारीयता ही अनुभूति और समाधान का प्रत्यक्ष रूप

व्यवहार विज्ञान का शिक्षा में समावेशपूर्वक ही आकांक्षाद्वय की वस्तुओ का उपयोग, सदुपयोग

विधि पालन कामना हर मानव में; कामना, इच्छा, तीव्र इच्छा, संकल्प, संभावना, सुगमता, उपलब्धि, अधिकार, स्वतंत्रता, स्वत्व, स्वत्व को व्यवहार मे चरितार्थ करना ही शिक्षा और व्यवस्था का आद्यान्त कार्यक्रम एवं उपलब्धि; संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था का सम्मिलित रूप ही शिक्षा

शिक्षा, दीक्षा और कृत्रिम वातावरण ही संस्कारदायी

कृत्रिम वातावरण= आकांक्षाद्वय संबंधी साधनो सहित प्रचार, प्रर्दशन, प्रकाशन

मानवीयतापूर्ण व्यवहार और आचरण योग्य क्षमता, आकांक्षाद्वय सीमानुवर्ती उत्पादन योग्य योग्यता और मूल्यत्रयानुभूति मे निष्ठा का निर्माण करना ही कृत्रिम वातावरण की सफलता/चरितार्थता

शिष्ट मूल्य एवं मूल्यवता का संयुक्त रूप ही विधि, अनुभव एवं समाधान का संयुक्त रूप ही मूल्य एवं शिष्ट मूल्यवत्ता

मानवीयता नियमत्रयपूर्वक कार्यक्रमत्रय सहित नवधा स्थापित मूल्य, नवधा शिष्ट मूल्य एवं द्विधा वस्तु मूल्य मे किया गया विनियोग ही विधि

विनियोग= प्रयोग व्यवहार एवं अनुभव सुलभ हो जाना (सुलभत्रय)

विधि विहित जीवन यापनाधिकार ही हर मानव का मौलिक अधिकार

मौलिक अधिकार का पालन, अनुसरण एवं अनुशीलन ही स्वतंत्रता का द्योतक

मानव के मौलिक अधिकार का प्रयोग व्यक्ति के आचरण एवं व्यवहार, परिवार के सहयोग एवं सहकार, समाज के प्रबोधन एवं प्रोत्साहन, राष्ट्र के संरक्षण एवं संवर्द्धन तथा अंर्तराष्ट्र में उसके अनुकूल स्थिति परिस्थिति(परंपरा के आयाम की एकात्मता) के लिये किया गया कार्यक्रम है।

यही स्वत्व एवं स्वतंत्रतापूर्वक व्यक्ति मे मौलिक अधिकार (का आचरण), परिवार मे सहकारिता, समाज मे सह अस्तित्व और राष्ट्र मे अखण्डता और प्रभुसत्ता का आचरण है।

अध्याय 39

मानव का सम्पूर्ण कार्यक्रम धर्मिक, आर्थिक एवं राज्यनिति मे से के लिए है।

प्रबुद्ध मानव के द्वारा शिक्षा एवं व्यवस्था संहित का उद्गम और उसके व्यवहारन्वयन से प्रबुद्ध जनजाति का निर्माण

विकास व जागृति के क्रम मे पाई जाने वाली क्रम प्रणाली/सघन प्रणाली ही नियति क्रम

कांक्षा सहित नियति क्रमानुषंगी प्रक्रिया ही कार्यक्रम

सभी कार्यक्रम का लक्ष्य मूल्योद्घाटन एवं मूल्यवहन; आश्वासन और विश्वसन प्रदान करना ही कार्यक्रम का उद्देश्य; प्रमाण(अनुभव, व्यवहार और प्रयोग) सिद्ध कार्यक्रमत्रय की सुलभता ही मानव को प्रमाणित बनाने के समर्थ

आर्थिक कार्यक्रम को प्रयोग प्रमाण, सुरक्षात्मक कार्यक्रम को व्यवहार प्रमाण और सदुपयोगात्मक कार्यक्रम को अनुभव प्रमाण प्रधानतः सिद्ध करता है।

परस्पर मूल्यत्रय का आदान प्रदान ही व्यवहार

स्थापित, शिष्ट एवं वस्तु मूल्य का निर्वाह ही मन तन धन का सदुपयोग

धर्मनैतिक कार्यक्रम– अर्थ का उपयोग, सदुपयोग एवं वितरण

राज्यनैतिक कार्यक्रम– अर्थ (की जो व्यवहार और व्यवहारिकता है उसी) का संरक्षण

आर्थिक कार्यक्रम– शुद्धतः उत्पादन पर आधारित

वस्तु मूल्य का आदान प्रदान वस्तु और सेवा के रूप में; शिष्ट मूल्य का आदान प्रदान मुद्रा, भंगिमा, अंगहारपूर्वक वस्तु के अर्पण और सेवा के रूप मे तथा स्थापित मूल्य का आदान–प्रदान शिष्ट मूल्य सहित व्यंजनीयता के रूप मे

स्थापित मूल्य के आनुषंगिक शिष्ट मूल्य, शिष्ट मूल्य के आनुषंगिक वस्तु मूल्य का प्रत्येक संबंधो मे व्यवहृत किया जाना ही धर्मनैतिक कार्यक्रम

प्रेरित होना व्यंजना और प्रेरित करना व्यंजनीयता; यही तादात्म सिद्धि का निर्माण करता है।

मानव नाम, रूप, गुण, स्वभाव और धर्म में तादात्म होने के लिये प्रवृत्त; तादात्म्यता= प्रयोजन सहित पूर्ण स्वीकृति= प्रतिबद्धता; वास्तविकता पर आधारित स्वीकृतियां प्रतिबद्धता मे तादात्म्यता पूर्वक प्रस्थापित होती हैं।

अध्याय 40

पांडित्य ही मनुष्य मे विशिष्टता है।

अनुभव योग्य क्षमता ही पांडित्य का प्रधान लक्षण; प्रमाण प्रबुद्धता की निष्पत्ति; स्थिति = प्रकटन = दृश्य; दर्शन क्षमतानुसार ही दृश्य का दर्शन= मूल्यांकन क्षमता; मानव प्रयोजन= मोक्ष, धर्म, अर्थ और काम; इसी क्रम से सिद्धि, प्रतिबद्धता, प्रतीति एवं भास

सिद्धि= सुख= सुख, शांति, संतोष, आनंद

अनुभूति= धर्म सिद्धि= मोक्ष– अतिमानवीयतापूर्ण जीवन में चरितार्थ

मानवीयतापूर्ण जीवन में धर्म के प्रति प्रतिबद्धता= समाज गठन का मूल तत्व; स्थितिवत्ता का पूर्ण विश्लेषण ही मूल्यानुभूति

मूल्यानुभूति ही निर्वाह क्षमता, क्षमता से प्रेरणा, यही प्रेरणा व्यंजनोत्पादी प्रक्रिया; फलस्वरूप कार्यक्रम निष्पन्न

शिष्ट मूल्य का प्रयोजन एवं वस्तु मूल्य का उपयोग मानव के साथ व्यवहार में

क्रम ही विश्लेषण और उपलब्धि ही अनुभूति हैं; कारण–गुण–गणित से निर्णय

प्रत्येक उपलब्धि कार्यक्रमपूर्वक ही उपलब्ध

वस्तु उत्पादन के विपुलीकरण हेतु साधन और प्रतिभा का समुचित संयोजन किया जाना भी व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण कार्य

शिष्ट एवं व्यवसाय मूल्य का संरक्षण और संर्वद्धन क्रियाकलाप ही विधि व व्यवस्था की चरितार्थता

अध्याय 41

समाज का आधार मूल्यत्रय ही हैं।

व्यवहार, उत्पादन के लिये प्रेरणा; व्यवसाय उत्पादन के लिए साधन; व्यवहार शिक्षा और उसका संरक्षण, उत्पादन से अधिक महत्वपूर्ण

व्यवहार, उत्पादन की सफलता क्रम से अनुभूति और समाधान का प्रकटन है।

गुरू मूल्य में लघु मूल्य का नियोजन

मानव की परस्परता में स्थापित मूल्य का निर्वाह, शिष्ट मूल्य का व्यवहारान्वयन और वस्तु मूल्य के क्रियान्वयन योग्य योग्यता की स्थापना ही समाज संरचना का अभीष्ट

औचित्यता मे दृढ़ता ही संयमता, संयमता मे अतिवाद और रहस्यता का अत्याभाव

जो जैसा है, उसे वैसा ही समझ लेना विद्या है।

पूर्णता/सम्यकता (क्रियापूर्णता, आचरणपूर्णता) के लिए की गई रचना ही संरचना (समाज संरचना)

ज्ञानावस्था की इकाई पूर्णता के निकटवर्ती, अतिनिकटवर्ती, तटवर्ती

आवश्यकता, अनिवार्यता, अपरिहार्यता ही मानव में मूल्यग्राही और प्रदायी क्षमता को उत्पन्न करती है।

मूल्यग्राही क्षमता का आरंभ जड़ प्रकृति मे भी; मूल्यप्रदायी क्षमता केवल चैतन्य प्रकृति में

मानवीयता की सीमा में मूल्य ग्रहण एवं प्रदान का संतुलन/मूल्य प्रदान की अधिकता

व्यवहारिक विश्वसन और उत्पाद मे आश्वासन

आवश्यकतापूर्वक ही कला एवं उपयोगिता मूल्य की स्थापना; साथ ही उपयोग, वितरण, सेवा, समर्पण, ग्रहण क्रिया में प्रयोजित

समुचित शिक्षण, साधन और विनिमय सुलभता के योगफल मे उत्पादन–विनिमय आश्वासन

अपव्ययतापूर्वक अपव्ययी का अनिष्ट होना भावी

गुणात्मक परिवर्तन हेतु औचित्यता का निर्णय एवं तदनुसार आचरण अनिवार्य; मानवीयतापूर्ण जीवन मे बौद्धिक समाधान एवं भौतिक समृद्धि

अपव्यय तथा अज्ञानपूर्वक मर्ध्यता(असमृद्धि/अभाव) और समस्या

आवश्यकता से अधिक उत्पादन ही भौतिक समृद्धि का प्रत्यक्ष रूप– भौतिकवाद का आधार

स्थापित संबंधो का विधिवत निर्वाह ही व्यवहार आकांक्षा का आशय– जनवाद का सूत्र

स्थापित मूल्यो की अनुभूति योग्य क्षमता संपन्नता ही अनुभवात्मक अध्यात्मवाद का सूत्र

अनुभव, समाधान, व्यवहार और समृद्धि मानव जीवन के लिए अविभाज्य भाग

संम्पूर्ण अपेंक्षाये परस्परता मे, से, के लिए; आवश्यकताएॅ समाजमूलक

संबंध और संपर्क की विशालता के अनुरूप आवश्यकताएॅं; पूर्ति हेतु समस्त योजना–परियोजना

विरोध पर विजय ही गुणात्मक परिवर्तन का प्रधान लक्षण

मानव जीवन समग्रता= आयाम चतुष्टय की एकात्मकता + 5 स्थितियो मे 10 सोपानीय व्यवस्था की एकरुपता

विश्लेषण प्रकृति की सीमा मे; यही उसकी उपयोगिता और उपादेयता को स्पष्ट किया हैं।

वस्तु मूल्य, शिष्ट मूल्य, स्थापित मूल्य (कमशः वरीय)

अध्याय 42

भोगो मे संयमता से अभयतापूर्ण जीवन प्रत्यक्ष होता है।

अखण्ड सामाजिकता= परंपरा, प्रमाण और इतिहास

समाधान और अनुभुति हेतु शिक्षा प्रणाली, पद्धति एवं नीति का निर्धारण; व्यवहार और व्यवसाय के लिए विधि तथा व्यवस्था की स्थापना

मानवीयतापूर्ण जीवन, पद्धति, प्रणाली, नीति, आचरण एवं व्यवहार से ही सर्वमंगल, नित्यशुभ और जीवन सफल

भोगो मे संयमता हेतु पुरुषो मे यतीत्व(यत्नपूर्वक तरना) और स्त्रियों मे सतीत्व(सत्वपूर्वक तरना) अनिवार्य

जागृति की ओर श्रद्धा और विश्वासपूर्वक यत्नशील होना ही यतीत्व का लक्षण

विकास और जागृति मे निष्ठा और विश्वास संपन्न होना ही सतीत्व का प्रधान लक्षण; यह शिक्षा एवं दीक्षा–संस्कारपूर्वक सफल

भोगो मे संयमता के बिना धर्मिक, आर्थिक और राज्यनैतिक संतुलन संभव नही; भोगों में संयमता= अर्थ का सदुपयोग, सुरक्षा

सुरक्षा हो, सदुपयोग न हो= अराजकता; सदुपयोग हो, सुरक्षा न हो= द्रोह, फलतः विद्रोह

दलन/दमनात्मक उपाय(बल प्रयोगात्मक दण्ड और वध विध्वंसात्मक दण्ड) पूर्वक सदुपयोग, सुरक्षा संभव नही; शिक्षा, प्रचार, प्रदर्शन, प्रकाशन, उद्‌बोधन, परिचर्चा और सद्‌व्ययता का मूल्यांकन करने योग्य व्यवस्थापूर्वक ही सदुपयोग की सुनिश्चितता

संस्कार में गुणात्मक परिवर्तनपूर्वक सदुपयोग; गुणात्मक परिवर्तन नियमत्रय संबंद्ध वस्तु बिषयात्मक तथ्य को बोधगम्य और हृदयंगम कराने से; आतंक स्तंभित करने का उपाय न कि गुणात्मक परिवर्तन का

व्यवस्था, पद्धति, प्रणाली एवं नीति में मानवीयता का समावेश करना ही पूर्णता, फलतः संरक्षण

मानवीयता को प्रस्थापित करने योग्य समृद्ध शिक्षा प्रणाली, पद्धति और नीति पूर्वक ही मानवीयता में संक्रमण

संपूर्ण जनजाति मानवीयतापूर्ण जीवन मे संक्रमित होने तक क्रूर दण्ड विधानपूर्वक स्तंभन प्रक्रिया की उपायदेयता

मानव स्वधर्म प्रतिष्ठा मे प्रतिष्ठित होने हेतु बाध्य

अनुभव से विचार का, विचार से व्यवहार का, व्यवहार से उत्पादन का नियंत्रण

प्रिय, हित, लाभ प्रवृत्तियो का न्याय सम्मत होना ही संयमता

मानव के अथक प्रयास एवं शुभकामनापूर्वक ही यह विशाल संपर्क और संपर्क सुलभ स्थिति निर्मित; निरंतरता हेतु व्यवहार संबंध का समृद्ध होना अपरिहार्य

व्यवहार संबंध मे ही एकात्मकता सिद्ध; धन व्यवहार हेतु साधन

कल्पित प्रभाव मे लुब्धायमान होना ही प्रलोभन; प्रभव/प्रभाव/ स्थिति मे जिसका लोप हो वही प्रलोभन

अध्याय 43

समस्त प्रकार के वर्ग की एकमात्र समाधान स्थली मानवीयता ही है।

मानवीयता मे ही मानव की प्रतिष्ठा/परंपरा

अर्थ (तन, मन, धन) का आचरित होना ही चरितार्थ; धन का आचरण उपयोगिता एवं कला में, तन का आचरण नवधा शिष्ट मूल्य में और मन का आचरण नवधा स्थापित मूल्य में प्रतिष्ठित; निश्चित लक्ष्य हेतु स्वस्थिति को पाना ही प्रतिष्ठा

क्रियापूर्णता पूर्वक मानवीयता से परिपूर्ण; आचरणपूर्णता पूर्वक दया, कृपा, करुणामय स्वभाव; पूर्णता के अनन्तर पूर्णता की निरंतरता

स्थापित मूल्य के योगफल से ही क्रियापूर्णता और आचरणपूर्णता प्रत्यक्ष

संपूर्ण स्थापित मूल्य प्रेम जैसे पूर्ण मूल्य की ही परावर्तित नामकरण की स्थितियॉ

संबंधो की विविधता का स्थापित मूल्य में एकता

जिस एक में ही सबका आश्रय हो तथा जो सबके लिये प्रश्रय हो; साथ ही जो सबकी तृप्ति एवं पूर्णता हो वही अनेक में एकात्मता

व्यवहार मे सत्तामयता ही प्रेममयता की संज्ञा से निर्देशित; अतः स्थापित मूल्य= अध्यात्म मूल्य

प्रत्येक मानव/संबंध भावभिभूत है।

मूल्यानुभूति क्षमता अनुभव में चरितार्थ, व्यवहार में प्रयोजित और उत्पादन में नियोजित होने में समर्थ होती है।

प्राण पद चक्र, भ्रांति पद चक्र, देव पद चक्र; पदमुक्ति ही आचरणपूर्णता

दायित्व निर्वाह मे ही अर्थ का प्रयोजित होना प्रसिद्ध है।

संपूर्ण अर्थ संबंधो मे ही प्रयोजित; स्थापित मूल्यो की अनुभूतिपूर्वक ही प्रयोजित अर्थ का प्रयोजन

अज्ञान/अत्याशापूर्वक गुरू मूल्य की उपेक्षा

अध्याय 44

अभयता का प्रत्यक्ष रुप ही विश्वास है।

अमानवीयता में मानवीयता का भास, आभास, प्रतिति; फलस्वरुप मानवीयता में संक्रमण की संभावना की स्पष्टता

विश्वास और अनन्यता अन्योनाश्रित; संपूर्ण चैतन्य प्रकृति स्वभाव और धर्म को प्रकट करती है; जीवावस्था मे स्वभाव का प्रकटन और मानव में स्वभाव, धर्म का प्रकटन

अनुभवपूर्वक प्रकटन पूर्वक प्रसारण

पदार्थावस्था मे रुप प्रधान अस्तित्व धर्म, प्राणावस्था मे रुप, गुण प्रधान पुष्टि धर्म, जीवावस्था में रुप, गुण, स्वभाव प्रधान आशा धर्म, मानव मे रुप, गुण, स्वभाव, धर्म प्रधान सुख धर्म का प्रकटन और प्रसारण; जबकि हर इकाई रुप, गुण, स्वभाव, धर्म का अविभाज्य वर्तमान

मानवीयता ही वैभव; वैभव क्रम से इतिहास, चरितार्थता और कार्यक्रम

अमानवीयतापूर्ण कामना= निषेध; अमानवीयतापूर्ण कामना= विधि; अमानवीयतापूर्ण कामना= आप्त कामना

आप्त कामना में विधि का प्रकटन; विधि का प्रकटन ही जीवन सफलता के लिये मार्गदर्शन तथा नीति जीवन सफलता के लिये कार्यक्रम

विधि से नीति की निष्पत्ति नैसर्गिक वास्तविकताओ के आधार पर; विधि मे अनुगमन ही गुणात्मक परिवर्तन

अध्याय 45 आवेश मानव की स्वभाव गति नहीं है

सफलता हेतु स्वभाव गति मे रहना अनिवार्य; अनावश्यक वातावरण से निष्प्रभावित रहने का प्रयास साधारण, कठोर और कठोरतम पद्धतियो से संपन्न; इस हेतु व्यक्तिगत और सामूहिक प्रक्रिया प्रसिद्ध; व्यक्तिगत रुप में गुणात्मक परिवर्तन, लोक सामान्य नही होने के कारण आदर्श मे गण्य; अतः मानव में जागृति का प्रमाण शिक्षा व व्यवस्था पद्धति में पूर्णता को प्रदान करने में समर्थ नही; अथवा उस समय के लिए आवश्यकता नहीं रही

आवश्यकता के बिना उपलब्धि का लक्ष्य और उसके लिये विधिवत प्रयास नहीं; वर्तमान वास्तविकता मानवता की सर्वसुलभता के लिये अनिवार्यता को स्पष्ट कर रही है। इसी सत्यतावश मानव अमानवीयता से मानवीयतापूर्ण जीवन मे संक्रमित होने बाध्य

जड़ प्रकृति मे आवेशित गति 5 प्रकार की शक्ति के रूप मे गण्य

चैतन्य प्रकृति मे मूल प्रवृत्तियों का ॠणात्मक, धनात्मक परिवर्तन होना और वृत्तियों का ॠणात्मक, धनात्मक परिमार्जन होना पाया जाता है; गणनपूर्णता तक परिणाम, क्रियापूर्णता तक परिवर्तन और आचरणपूर्णता तक परिमार्जन प्रसिद्ध

मूल प्रवृत्तियाँ हर्ष और क्लेश परिपाकात्मक श्रृंखला में स्पष्ट; क्लेश परिपाकात्मक मूल प्रवृत्तियॉ– आवेश– षड्विकार– सम्मोहनपूर्वक काम, विरोधवश क्रोध, संग्रहवश लोभ, रहस्यतावश मोह, अभिमान और आडम्बरवश मद, असहअस्तित्व और भयवश मात्सर्य

मानवीयतापूर्ण जीवन में कामावेश शिष्टतापूर्ण लज्जा में, कोधावेश धैर्यपूर्ण साहस में, लोभावेश उदारतापूर्ण दया में, मोहावेश अर्हतापूर्वक अपेक्षा में, मदावेश सम्मानाभिव्यक्ति पूर्वक कृतज्ञता में, मात्सर्यावेश सहअस्तित्व पूर्वक अभयता में परिवर्तित– यही शिक्षा और व्यवस्था का अभीष्ट

अत्याशा(विवेचना योग्य क्षमता), आलस्य(वस्तुमूल्यानुभूति), प्रमाद(व्यवहार मूल्यानुभूति), अज्ञान(शिक्षा व व्यवस्था मे पूर्ण क्षमता के अभाव में), शोषण(जागृति के मूल्यांकन), आक्रमण(सहअस्तित्व की मौलिकता का अनुभव करने योग्य) और अपहरणपूर्वक(व्यक्तित्व और प्रतिभा के संतुलन के अभाव में) ही मानव परस्पर आतंकित व सशंकित

भयपूर्वक ही मानव संग्रह के लिये में, से, के लिए प्रवृत्त; दबाव एवं तनाव को भुलाने के लिए मानव विलासिता मे प्रवृत्त, फलतः अतिभोग, फलतः परपीड़ा

प्रतिभा एवं व्यक्तित्व की विषमता ही पीड़ा, जो स्ववंचना (अक्षमता) का द्योतक; स्वयं पीड़ित हुये बिना पीड़ित करना संभव नही; इसके अतिरिक्त अज्ञानपूर्वक घटनात्मक पीड़ा

अध्याय 46

प्रत्येक स्थिति में किये गए अभ्यास का प्रत्यक्ष रूप ही व्यवहार एवं उत्पादन है।

लक्ष्य की अपेक्षा में अभ्यास; पूर्णता के प्रति जो पीड़ा है, वही संवेदना है।

प्रेम विशालतम प्रभावशाली मूल्य; जो शिष्ट मूल्य पूर्वक श्रद्धा, स्नेह और वात्सल्य के माध्यम से अनुभवगम्य, जिससे ही सामाजिकता का निर्वाह, शिष्ट मूल्य की अभिव्यक्ति और वस्तु मूल्य का संयमन

स्थापित मूल्यानुभूतिक्रम में ही प्रेमानुभूति; यह क्रम से ममता, स्नेह, विश्वास, कृतज्ञता, वात्सल्य, सम्मान, गौरव, श्रद्धा और प्रेम हैं।

मानवीयतापूर्ण जीवन में सर्वप्रथम अनुभव में आने वाला मूल्य विश्वास, द्वितीय मूल्य श्रद्धा; इन दोनो का योगफल ही क्रम से प्रेमानुभूति पर्यंत क्षमता को जागृत कर देता है। स्वतंत्रता ही प्रेमानुभूति का प्रधान लक्षण

अनुभव का तात्पर्य क्रमपूर्वक प्राप्तोत्पत्ति; मानव में क्रमानुभूति केवल मूल्यत्रय ही है।

प्रेमानुभूति के अनन्तर ही वास्तविकताएँ स्पष्ट; प्रेममयता की अनुभूति ही कृतकृत्यता(और कुछ करना शेष न हो)

गुणात्मक परिर्वतन के संदर्भ मे ही दायित्व और कर्तव्य प्रमाणित

अमानवीयता से मानवीयता में अनुगमन हेतु नियंत्रण पूर्वक दायित्व और कर्तव्य प्रमाणित; मानवीयता से अतिमानवीयता में अनुगमन हेतु छह स्वभाव पूर्वक कर्तव्य और दायित्व प्रमाणित; अनन्तर वह स्वभावगत

अध्याय 47 व्यक्तित्व एवं प्रतिभा की चरमोत्कर्षता में ही प्रेमानुभूति है।

प्रेमानुभूति में तन्मयता एवं अनन्यता स्वभाव अभिव्यक्ति; मानव ही प्रेमी और प्रेमास्पद होने के लिए अर्ह; मानव ही मानव के लिए प्रेमानुभूति के लिए सुलभ उपाय

प्रेमानुभूति पूर्ण मानव मे स्वतंत्रतापूर्वक सामाजिकता की अभिव्यक्ति; प्रेमानुभूतिमयता ही अभिव्यक्ति शिष्टता/आचरण में इंगित; इंगित होना ही व्यंजना, व्यंजना ही क्रम से भास, आभास, प्रतीति, अवधारणा और अनुभूति

प्रेम ही स्वर्गीयता का आद्यान्त आधार; स्वर्गीयता का प्रत्यक्ष रूप ही अनन्यता; प्रेममयता की अनुभूति= जीवन मे पूर्णता= जागृति पूर्णता; इसी मे तिरोभाव (भाव की निरंतरता); मानव शुभ आशा से संपन्न है ही; शुभकामना उदय मानवीयता में प्रत्यक्ष

प्रेमानुभूति का आधार= स्थापित मूल्यानुभूति; अनुभव मूल्यों से अधिक नहीं; सर्वमंगलमयता प्रेमानुभूति में ही है। बौद्धिक समाधान और भौतिक समृद्धि ही इसका प्रत्यक्ष रूप; संम्पूर्ण योगाभ्यास की चरमोपलब्धि भी प्रेमानुभूति; सत्य चितंन से भी प्रेमानुभूति; प्रेमानुभूति योग्य क्षमता संपन्नता हेतु शुचिता और गुणात्मक परिवर्तन मे अनुशीलन अनिवार्य साधना; सम्यकता की ओर गतिशीलता हेतु आचरण, व्यवहार और व्यवसाय ही साधना और अभ्यास; शारीरिक स्वस्थता और शिष्टता का योगफल ही शुचिता; प्रमाण परंपरा मे अनुगमन ही अनुशीलन

मानव में चारो आयामों का पूर्ण जागृति ही प्रेमानुभूति योग्य क्षमता; इस हेतु क्रार्यक्रम; प्रेमानुभूति संपन्न जनमानस को उज्जवल करने हेतु शिक्षा की भूमिका अति महत्वपूर्ण; वरिष्ठ अनुभूति ही प्रेमानुभूति, जो पूर्णतया सामाजिक एवं व्यावहारिक

उपदेश, स्मरण, कीर्तन, संकीर्तन की चरितार्थता भी प्रेमानुभूति ही; पूर्णता संपन्नता हेतु वातावरण निर्माण करना ही सामाजिक, सर्वमंगल कार्यक्रम; संपूर्ण प्रकार के संयम, तपस्या और अनुष्ठान की चरितार्थता का सार्थक फलन प्रेमानुभूति और व्यवस्था का प्रमाण है।

शिक्षा, व्यवस्था, संस्कृति, सभ्यता, श्रवण, मनन, निदिध्यासन, नित्य–नैमित्यिक कर्म, साहित्य, कला, भक्ति, पूजा, स्तवन, गायन और प्रदर्शन समुच्चय की चरितार्थता और सार्थकता भी प्रेमानुभूति एवं व्यवस्था में प्रमाणित होना; मूल लक्ष्य से विचलित होने पर साधन ही लक्ष्य

मानवीयता का सर्वसुलभता हेतु शिक्षा में पूर्णता का समावेश= उत्पादन एवं व्यवहार शिक्षा का संयुक्त अध्ययन= विज्ञान+चैतन्य पक्ष, मानव विज्ञान+ संस्कार पक्ष ; दर्शनशास्त्र + क्रियापक्ष; साहित्य + तात्विक पक्ष; राज्यनीति + मानवीयता की संरक्षण नीति; अर्थशास्त्र + तन,मन,धन रूपी अर्थ का सदुपयोग एवं सुरक्षात्मक नीति; भूगोल; इतिहास+मानव, मानवीयता का अध्ययन

अध्याय 48

उत्पादन एवं व्यवहारिकता समाज में, से, के लिए अपरिहार्य

वस्तु उत्पादन और उसकी विपुलता को संभव, नियंत्रित, प्रयोजित और उसका सदुपयोग करने के लिए समाज में अखण्डता सहज चेतना अपरिहार्य; साक्ष्य विहीन उपलब्धि और उसके लिए प्रेरणा ही रहस्य है

व्यक्तित्व का प्रत्यक्ष रुप– सद्व्यवहार + आचरण

व्यक्तित्व एवं प्रतिभा के संतुलन और समृद्धि पर्यंत गुणात्मक परिवर्तन अनिवार्य

व्यक्तित्व + उत्पाद विहीनता= अंतर्विरोध; प्रतिभा संपन्नता(उत्पादन विपुलता) + व्यक्तित्व विहीनता= अंतःबहिर्विरोध

प्रतिभा का परिचय उत्पादन/व्यवसाय में और व्यक्तित्व का परिचय व्यवहार में; व्यक्ति की ख्याति प्रतिभापूर्वक; प्रतिभा का नियंत्रण व्यक्तित्व पूर्वक

प्रत्येक वास्तविकता सघन क्रमपूर्वक अभिव्यक्ति; क्रम ही नियति, नियति ही विकास गति श्रृंखला; दर्शनपूर्वक प्रकृति विश्लेषण, फलतः प्रमाणत्रय; प्रमाणों के आधार पर सिद्धांत का प्रतिपादन; सिद्धांतों के आधार पर संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था सिद्ध

प्रकृति का मूल सिद्धांत= श्रम, गति, परिणाम; इसी सि़द्धांत के आधार पर पूर्णतात्रय, तात्रय, कालत्रय, क्रियात्रय, अवस्था चतुष्टय के विश्लेषणपूर्वक मानव के 4 आयाम और 5 स्थितियाँ स्पष्ट; सि़द्धांत ही वाद–विवाद, संशय, विपर्यय, अतिव्याप्ति/अनाव्याप्ति/अव्याप्ति दोषों से मुक्त यथार्थता का बोध सुलभ कर देता है; यही शिक्षा की गरिमा

परिणाम में ही गठनपूर्णता की महत्ता, श्रम में ही विश्राम की आवश्यकता और गति में ही गंतव्य की अनिवार्यता प्रकट; गठनपूर्णता गणित के प्रयोग से, क्रियापूर्णता व्यवहार पूर्वक, आचरणपूर्णता अनुभवपूर्वक सिद्ध; ये सिद्धियाँ ही प्रमाण

मानवीयता की अपेक्षा मे ही अमानवीयता और अतिमानवीयता का अध्ययन; प्रमाण ही सिद्धांत का प्रत्यक्ष रूप जो जीवन है। प्रयोग, व्यवहार, समाधान और अनुभूति से अधिक जीवन नहीं

अध्ययन 49

प्रमाणत्रय ही विश्वास है।

प्रमाण एवं सिद्धांत ही निर्विवाद; वास्तविकताओ को इंगित करना ही प्रमाण का तात्पर्य; विश्लेषण प्रक्रिया ही सिद्धांत

मानवीयता से परिपूर्ण होने के अनन्तर विश्वासपूर्ण जीवन में प्रगतिशील कार्यक्रम, जो अतिमानवीयता से परिपूर्ण होते तक संबद्ध

संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था की एकसूत्रता ही चतुर्दिग उदय

अध्ययन 50

मनुष्य मे स्थूल व सूक्ष्म भेद से क्रियाशीलता प्रसिद्ध है।

इंद्रिय व्यापार और उत्पादन= स्थूल क्रिया; मन, वृत्ति, चित्त और बुद्धि की क्रियाशीलता और मूल्यानुभूति= सूक्ष्म क्रिया; स्थूल क्रिया सूक्ष्म क्रिया से अनुप्राणित और नियंत्रित

उत्पादन से समृद्धि, व्यवहार से सहअस्तित्व, विचार में समाधान और सत्य में अनुभूति चरितार्थ; इसी हेतु संपूर्ण अभ्यास

स्थूल क्रियाओ का नियंत्रण और सूक्ष्म क्रियाओं का पूर्णता और परिमार्जन प्रसिद्ध; मन, वित्ति और चित्त ही सूक्ष्म क्रिया, बुद्धि और आत्मा कारण क्रिया

चैतन्य जीवन= सूक्ष्म और कारण क्रिया का संम्मिलित रूप; उत्पादन और व्यवहार में ही विभव एवं पराभव का परिचय

विचारपूर्णता(निपुणता, कुशलता, पांडित्य) के लिए शिक्षा, जिसका स्थूल रूप उत्पादन और व्यवहार

अनुभव से अधिक उदय; प्रत्येक उदय अनुभव क्रिया के लिए विशालता; यही उदय जो अनुमानपूर्वक सन्निहित होता है, इसके पूर्व मे वह आगम क्रिया थी ही; प्रत्येक उदय प्रयोग, व्यवहार और अनुभूति के लिए उत्प्रेरणा; चैतन्य क्रिया का प्रत्यावर्तन ही व्यवहार और उत्पादन जीवन संबंधी भ्रम व रहस्य एवं उत्पादन संबंधी अप्राप्तियाँ मूलतः अज्ञान की ही द्योतक

उदय ही गुणात्मक परिवर्तन और परिमार्जन हेतु बाध्यता; शिक्षा और व्यवस्था ही उदय के लिए समर्थ प्रेरणा

सत्ता में संपृक्त प्रकृति (वास्तविकता) ही उदय सर्वस्व; यह प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम क्रिया के रूप में ज्ञातव्य

प्रत्यावर्तन अनुभव के रूप में, परिवर्तन धनऋणात्मक रूप में तथा परावर्तन व्यवहार व उत्पादन के रूप में

अप्रधान रुप मे किया गया भोग ही उपभोग; मानवीयता पूर्ण जीवन मे भोग अवरीय और दिव्य मानवीयता मे नगण्य; शिष्टता की सीमा मे संम्पूर्ण भोग संयत

विषयो के प्रति आसक्ति/अनासक्ति, ऐषणाओ के प्रति प्रवृत्ति/अप्रवृत्ति तथा अनुभूति के प्रति संकल्प

संज्ञानीयता ही आयोजन का प्रधान कारण; संम्पूर्ण आयोजन धर्मियता के प्रसारण हेतु

आयोजनात्मक और योजनात्मक कार्यक्रम

आयोजन= आत्मीयतापूर्ण(न्याय सम्मत) पद्धति से की गई सम्मेलानात्मक योजना; मानवीयता /अतिमानवीयता पूर्वक ही सफल

सम्मेलन= पूर्णता की अपेक्षा में या पूर्णतया परस्पर मिलन ही सम्मेलन

योजनाएँ उत्पादन विनिमय के संबंध में जो साधन नियोजन सहित परियोजना मे परिवर्तित

आयोजन मे विनियोग संबंधी, योजना मे नियोजन संबंधी निश्चय, निर्णय, संभावना, व्यवहारिकता और प्रमाण सम्मत

आयोजनात्मक कार्यक्रम अर्थ के सदुपयोगात्मक और सुरक्षात्मक तथ्य को स्पष्ट करता है।

अध्याय 51 अभ्यास सम्रग की उपलब्धि= पूर्णताद्वय

स्वयं में रहस्यता के बिना रहस्यता प्रिय होना संभव नही; कल्पनात्मक श्रेष्ठ/नेष्ठ सिद्धि सामाजिकता को सिद्ध करने मे समर्थ नहीं; चिदानन्द (अभय, सतर्कता, क्रियापूर्णता, संतोष, सामाजिकता) आत्मानन्द और बह्मानंद ही परमावधि उपलब्धि

विधिवत अभ्यास की प्रथम उपलब्धि चिदानंद(आधार– समाधान); आत्मानंद प्रत्यावर्तन सिद्धि; मानवीयतापूर्ण जीवन से समृद्ध होने के अनन्तर ही प्रत्यावर्तन प्रक्रिया संपन्न; प्रत्यावर्तन के अनन्तर मानव स्वभावतः स्वतंत्र, यही देव मानव पद; क्रमशः आत्मा से बुद्धि, बुद्धि से चित्त, चित्त से वृत्ति और वृत्ति से मन अनुशासित; मन से मेधस, मेधस से इंद्रिय व्यापार

बह्मनंद ही अभ्यास की परमोपब्धि= सत्तामयता में अनुभूति= आचरणपूर्णता= आप्त पुरूष= मध्यस्थ जीवन की सर्वोच्च स्थिति

चिदानंद स्थूल और सूक्ष्म जीवन की निर्विरोधिता में, आत्मानंद स्थूल, सूक्ष्म, कारण जीवन में एकसूत्रता के रुप में; ब्रह्मानंद सत्तामयता में अनुभूति के रुप में प्रमाणित; मानवीयतापूर्ण जीवन में चिदानन्द, देवमानवीयतापूर्ण जीवन में आत्मानंद, दिव्यमानवीयतापूर्ण जीवन में ब्रह्मानंद चरितार्थ; चिदानंद और आत्मानंद ब्रह्मनुभूति में समाए; चिदानंद के सर्वसुलभ होने की संभावना; मानवीयतापूर्ण समाज संरचना, शिक्षा व व्यवस्था ही उसके लिए आवश्यकीय तत्व

अध्यात्म चितंन सत्तामयता को स्पष्ट करने के लिए, बौद्धिक/मनोविज्ञान चितंन संवेदनशील और चैतन्य जीवन का विश्लेषण करने में तथा भौतिक चितंन रासायनिक और भौतिक क्रिया का निरीक्षण, परीक्षण, सर्वेक्षण करने में क्रम से ज्ञान और अनुभूति, दर्शन और अनुभूति, प्रयोग और अनुभूति होती है।

मानवीयता ही मानव का स्वत्व, स्वत्व का व्यवहृत होना/न होना शिक्षा और व्यवस्था पर, शिक्षा और व्यवस्था धर्मनैतिक और राज्यनैतिक संस्थाओ की क्षमता पर, इन संस्थाओ की क्षमता उपलब्ध दर्शन पर और दर्शन भौतिक, बौद्धिक, आध्यात्मिकता पर आधारित

अध्याय 52

अमानवीयता और वर्ग संघर्ष की सीमा में भय का अभाव नही है।

भय मुक्ति हेतु वैयक्तिक सीमा में साधना और अभ्यास; ऐसा सफल अभ्यास ही आदर्श; सम्पूर्ण आदर्श आचरण योग्य; जब तक आदर्श शेष है, तब तक जीवन में परिमार्जन भावी; आदर्श परंपरा नही; आदर्शात्मक आचरण साधना से उद्‌गमित न कि परंपरा से; अतः अभ्यास सिद्ध आचरण और सामान्य जनजाति के बीच दूरी; निराकरण हेतु मानवीयतापूर्ण जीवन शिक्षा, व्यवस्था और समाज संरचना; मानवीयतापूर्ण जीवन में आचरण और व्यवहार संबंधी आदर्श सामान्य हो जाता है।

आदर्श पर्यंत रहस्यता का अभाव नही है; रहस्यतापूर्वक विचार गति अवरूद्ध; प्रलोभन से संविधा, विलासिता और अतिभोग में मानव आसक्त और प्रसक्त; भय और प्रलोभन पर आधारित सभी चर्चा रहस्य; ईश्वर तंत्रित धर्म, स्वर्ग और पुनर्जन्म के संदर्भ मे रहस्य; इनका निराकरण वास्तविकता पर आधारित

क्रियापूर्णता स्वर्ग, स्वर्गीयता, समाधान और समृद्धि को प्रकट करती है। आचरणपूर्णता भ्रममुक्ति और परमानंद को प्रमाणित करती है।

अभ्यास केवल वास्तविकताओ के अनुसंधान एवं अनुभव हेतु कार्यक्रम;

प्रकृति की अभ्युदयपूर्णता= सत्तामयता मे अनुभूति= जागृतिपूर्णता= सतर्कता और सजगता

यही अभ्यास का चरमोत्कर्ष; सतर्कता, व्यवहारपूर्णता और सजगता ही अनुभवपूर्णता का द्योतक

सत्तामयता मे अनुभूति ही चैतन्य प्रकृति की विशालता

अध्याय 53

मनुष्य जीवन में भक्ति वांछित उपलब्धि है।

भक्ति= भजन + सेवा; भयमुक्ति के लिए किया गया मानसिक एवं वाचिक क्रियाकलाप ही भजन; तद्नुकूल व्यवहार और आवश्यकता से अधिक उत्पादन तथा शेष का विधिवत् वितरण और परिचर्चा ही सेवा; भय मुक्ति हेतु तन्मयता ही क्रम से तदात्मता और तद्रूपता; इसके मूल मे अर्पण, समपर्ण

अर्पण= सेवा, सुश्रुषा; समर्पण = पूर्णता हेतु प्रस्तुति

जो जिसमे अर्पित, समर्पित होता है उसकी क्षमता तथा अर्पण, समर्पण की पूर्णता के योगफल मे भक्ति चरितार्थ; जागृति/गुणात्मक परिवर्तन ही तन्मयता की चरितार्थता; भक्ति में सफलता उभयाधिकार पर निर्भर; स्थापित मूल्य का अनुभव सहित शिष्ट मूल्य का आचरण ही भय मुक्ति का प्रत्यक्ष रूप

अमानव– मानव– देवमानव– दिव्यमानव(सेव्य)

पूर्णमूल्यानुभूति ही भक्ति की पराकाष्ठा

अध्याय 54

योगाभ्यास जागृति के अर्थ मे चरितार्थ होता है।

यह मानवीयतापूर्ण जीवन के अनंतर आरंभ जो श्रवण, मनन, निदिध्यासन/धारणा, ध्यान और समाधिपूर्वक चरितार्थ; आचरणपूर्णता ही जीवन चरितार्थता; योगाभ्यास शास्त्राध्ययन, उपदेश और स्वप्रेरणा का योगफल

मानवीयतापूर्ण जीवन के अनंतर वांछित वस्तु, देश और तत्व मे चित्त वृत्तियों का संयत होना पाया जाता है। यही धारणा है। धारणा पर पूर्णाधिकार के अनंतर उसके सारभूत भाग में अथवा वांछित भाग में चित्त वृत्ति का केन्द्रीभूत होना पाया जाता है, जो ध्यान क़ा द्योतक है। ध्येय के अर्थ मात्र/मूल्य में चित्त, वृत्ति और संकल्प का निमग्न होना ही समाधि; यही सत्तामयता मे अनुभूति और योगाभ्यास की चरम उपलब्धि;

श्रवण= धारणा, मनन= निष्ठा, ध्यान; निदिध्यासन= सहज निष्ठा/सहज समाधि= सत्ता में अनुभूतिमयता की निरंतरता; योगाभ्यास पूर्णता सामाजिक एवं व्यवहारिक;

उदय और अभ्यास का योगफल ही गुणात्मक परिवर्तन जो योगाभ्यास पूर्वक चरितार्थ

मानवीयता के अनंतर ही अभ्युदय का उदय; व्यायाम, आसन, प्राणायाम(शरीर का स्वेच्छानुरूप उपयोग करने, स्वस्थ रखने के लिए) योगाभ्यास के लिए सहायक वातावरण (प्रधानतः कृत्रिम) ही अभ्यास के लिए सहज उपलब्धि; कृत्रिम वातावरण= शिक्षा + व्यवस्था(प्रकाशन, प्रदर्शन एवं प्रचार)

अमानवीयतापूर्ण वातावरण में योगाभ्यास होने के लिए स्वयं मानवीयता से परिपूर्ण होना अनिवार्य; ऐसी स्थिति मे यह साधनों में गण्य है।

योगाभ्यास का पूर्व/मूल साधन= मानवीयता; मानवीयतापूर्ण जीवन मे वैचारिक, कायिक, वाचिक समत्व स्वभावतः सि़द्ध; मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि और आत्मा मे ही अनुभव योग्य क्षमता जागृत; अनुभूति मूल्यो मे, से, के लिए

मन और वृत्ति के योग से उपयोगिता मूल्यानुभूति, वृत्ति और चित्त के योग से उपयोगिता एवं कला मूल्यानुभूति, चित्त और बुद्धि के योग से शिष्ट मूल्यानुभूति, बुद्धि और आत्मा के योग से स्थापित मूल्यानुभूति, फलतः सत्तामयता मे अनुभूति योग्य क्षमता सिद्ध; यही सत्ता में संपृक्तता की अनुभूति= ब्रह्मनुभूति, यह आत्मा मे होने वाली विशेष अनुभूति, व्यापकता और विशालता में ही अनुभूतियाँ

साम्य, सहज एवं पूर्ण भेद से शिष्टता; विशाल(ममता, वात्सल्य, सम्मान), विशालतर(कृतज्ञता, श्रद्धा, गौरव), विशालतम(स्नेह, विश्वास, प्रेम) भेद से स्थापित मूल्य

अलंकार जीवन का अनिवार्य भाग जो यश/जागृति के अर्थ में प्रयोजित; यश जागृति के लिए प्रेरणा स्रोत; मानव जीवन में भाषा, भाव, संस्कृति और सभ्यता का यश; इनकी प्रमाणिकता ही इनका अलंकार

जीवन सर्तकता एवं सजगता में, भाषा तात्विकता/रसाभिव्यक्ति में, भाव मौलिकता में, संस्कृति मानवीयता में और सभ्यता गुणात्मक परिवर्तन में अलंकृत है।

रस जीवन मे अविभाज्य; रस= मूल्य= मूलतः स्थापित मूल्य; प्रेम= पूर्ण मूल्य= पूर्ण रस= रसैश्वर्य; रसानुभूति मे नाट्य अभिनय, नृत्य और प्रहसन सहायक; प्रधानतः साहित्य ही इनका माध्यम

मूल्यानुभूति= तात्विकता, रति

साधन= सत्यता के उद्घाटन हेतु प्रयुक्त, प्राप्त और स्थित साधन ही साहित्य; ऐसे साधन मानव मे 5, शब्द इनमें वरीयतम; शब्द, भाषा, साहित्य, काव्य, संहिता और सूत्र के रूप मे प्रयोजित

भाषा= भास, आभास एवं प्रतीति की व्यंजना

व्यंजनीयता= संवेदनशीलता; संवेदनशीलता ही व्यंजनोत्पादीयता और व्यंजनारत है।

भाषा में भाव की, भाषा भाव में शैली, भाषा भाव शैली में अलंकार और रस की, भाषा भाव शैली अलंकार और रस में भाषा विज्ञान तथा भाषा विज्ञान में भाषा के आश्लिष्ट एवं संश्लिष्ट भेद प्रभेद से साहित्य रचनाएँ

रत का गंतव्य रति= अनुभवात्मक, सानिध्यात्मक(संबंध एवं संपर्क मूलक)

जीवन, मानव, स्थापित मूल्य का अनुभव ही रस; रसानुभूति योग्य प्रेरणा ही साहित्य; रस मे प्रसक्ति ही रसिकता, जो गुणात्मक परिवर्तन का द्योतक; मानव मे पांडित्य पूर्वक ही साहित्य स्पष्ट

रसानुभूति सामाजिक, व्यवहारिक और प्रमाणिक

संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्थापूर्वक रसानुभूति सर्वसुलभ; फलतः भूमि स्वर्ग, मानव देवता, धर्म सफल और नित्य मंगल

जीवन सर्वस्व रसानुभूति में ही प्रमाणित; यही अभ्यास की चरितार्थता